टर्की का शेर

या

अतातुर्क कमाल का जीवन-चरित्र

लेखक—

विद्यावाचस्पति गणेशदत्त शर्मा गौड़ 'इन्द्र'

प्रकाशक—

कैलास-साहित्य मंदिर, बनारस।

प्रथ मावृत्ति] सन् १९३९ ई० [मूल्य १।)

जे० पी० अरोड़ा द्वारा—

लक्ष्मी-प्रेस, गुलानाला, बनारस में मुद्रित

लेखक का पूर्वकथन

ऐसे समय जब कि भारत में स्वातंत्र्य-संग्राम छिड़ा हुआ है, यहाँ के निवासियों को दूसरे देशों की राज्यक्रान्ति के इतिहास और राष्ट्र-निर्माताओं के जीवन चरित्रों का अध्ययन एवं मनन, उनके निर्दिष्ट पथ-प्रदर्शन में दीपक का कार्य दे सकते हैं। संसार के जिन राष्ट्रों ने परतंत्रता नष्ट करने में अथवा शासकों के अत्याचार को मिटा देने में अपने त्याग और बलिदान की पराकाष्ठा दिखलाई है, वे परतन्त्र राष्ट्रों के लिए पथ-प्रदर्शक हैं। क्रॉमवेल, लेलिन, डी-वेलरा जैसे देशभक्तों की जीवनी भारतवासियों के अध्ययन और मनन की चीजें हैं। इसी प्रकार बूढ़े टर्की को नाश के समय बचा लेने वाले तरुण मुस्तफा कमालपाशा की जीवनी बड़ी ही उपयोगी है। हम देखते हैं कि जब यूरोप के दूसरे राष्ट्र तुर्किस्तान को खा जाने के लिए उतावले हो रहे थे, उस समय पुरुष-व्याघ्र कमालपाशा गुर्रा कर सामने खड़ा हो जाता है और उनके मनसूबों पर पानी फेर देता है। यदि इस समय यह टर्की की स्वाधीनता का एक मात्र

कमालपाशा की जीवनी से हम उनकी कार्य कुशलता, देश-भक्ति, बुद्धिमत्ता, गाम्भीर्य, परिश्रम, लगन आदि बातों की शिक्षा ग्रहण कर सकते है।

मैं यूरोपीय महासमर के समय से ही मुस्तफा कमालपाशा के चरित्र का और उनके कार्यों का अध्ययन कर रहा था। मेरी बड़ी प्रबल इच्छा थी कि हिन्दी के पाठकों को 'कमाल' की जीवनी भेंट करूँ। आज मैं अपने चिरसंचित विचार को कार्यान्वित कर सका हूँ। मैंने इस पुस्तक के लिखने में निम्न पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओ के लेखों से सहायता ली है। अतएव मैं उनके लेखकों और सम्पादकों का आभार स्वीकार करता हूँ—

१—"गाजी मुस्तफा कमालपाशा की दास्तान" (उर्दू) लेखक 'मुंशी फाजिल' मोहम्मद अब्दुल्ला सा० आवान।
२—"मुस्तफा कमालपाशा" (उर्दू) लेखक मौलवी वजाहत हुसैन सा०।
३—"ग्रे वुल्फ" (Grey wolf,) (अंग्रेजी) ले० ओ० एच० सी० आर्मस्ट्रांग (Mr. H. C. Armstrong)।
४—"मुस्तफा कमालपाशा" (हिन्दी) श्री कात्तिकेयचरण मुखोपाध्याय। और
५—"इनसाइड यूरोप" (अंग्रेजी) ले० श्री जॉन गुंथर।
प्रताप, सैनिक, भारतमित्र, अर्जुन, मदीना (उर्दू), डेली एक्स-प्रेस आदि समाचार-पत्र।

—गणेशदत्त शर्मा 'इन्द्र'

विषय सूची

टर्की का शेर

१

कमालपाशा का बचपन

संसार में देखा गया है कि, जब जिस वस्तु की अत्यन्त आवश्यकता प्रतीत होने लगती है, तब उस वस्तु का प्रादुर्भाव होता है। योगिराज श्रीकृष्ण ने इसी अटल नियम को—

"यदा यदाहि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहं॥"

"जब-जब मनुष्य अपने कर्त्तव्यों को भूलकर इधर उधर भटकने लगते हैं, तब-तब उन्हें कर्त्तव्य-ज्ञान कराने के निमित्त किसी महापुरुष को आगे आना पड़ता है।" कहकर पुष्ट किया है। प्रत्यक्ष में भी हम ऐसा देख रहे हैं। हमारे इतिहास; हमारे इतिहास-ग्रंथ ही क्या समस्त भूमण्डल का इतिहास इसका साक्षी है। जब

विदेशी एवं अत्याचारी राजा रावण ने भारत में अपना पाँव जमाना शुरू किया, तब उसके अत्याचारों के शमनार्थ दशरथजी के पुत्र मर्यादा पुरुषोत्तम राम खड़े हुए और उसके पंजे से भारत की रक्षा की। जब देश में प्रजातंत्र को पादाक्रान्त करके राजतंत्र स्थापित करनेवाले कंस, जरासंध, शिशुपाल, दुर्योधन आदि अपनी मनमानी घरजानी करने लगे, तब उनकी विरोधिनी शक्ति का श्रीकृष्ण के रूप में जन्म हुआ। जब धार्मिक क्षेत्र में गड़बड़ मची, तब तीर्थङ्कर महावीर स्वामी, भगवान् बुद्ध, जगद्गुरु शंकराचार्य, स्वामी दयानन्द आदि महापुरुषों ने जन्म लिया। वर्तमान में लो० तिलक, महात्मा गान्धी, श्रीजवाहरलालजी नेहरू आदि श्रीकृष्ण के उक्त कथन की ही पुष्टि तो कर रहे हैं।

विदेशों में हजरत ईसा, पैगम्बर मोहम्मद साहब, हमारे कथन के प्रबल पोषक प्रमाण हैं। वीर नेपोलियन, महात्मा लेनिन, श्री० डी० वेलरा, मुस्तफा कमालपाशा आदि इसी कोटि के महापुरुषों में हैं। आज मुस्तफा कमालपाशा तुर्किस्तान में अपने युग का एक प्रतीक माना जाता है। मुसलमान लेखक याकूब हसनी ने यहाँ तक लिखा है कि "मुस्तफा कमालपाशा तुर्कों के उद्धार के लिए इस ज़माने में ईश्वर का नया अवतार है।" वास्तव में देखा जाय तो कमालपाशा इस युग में एक 'कमाल' ही है। उसके गुणों को देखते हुए, वह किसी महापुरुष से कम नहीं ठहरता। उसके असीम साहस, असाधारण प्रतिभा, वज्र-सदृश [illegible], दूरदर्शिता, देश और जाति का प्रेम, निर्भयता, स्फूर्ति, संगठन, [illegible] [illegible], [illegible], सहृदयता, कर्मठता आदि अनेक गुण ऐसे हैं, जिनके द्वारा वह मानव-समाज में

ऊँचा उठा हुआ, संसार के क्षितिज पर नक्षत्र की भाँति चमक रहा है। उसने अपने बुद्धिबल से, पुरुषार्थ से, कूटनीति से अपने देश की ऐसे संकट में रक्षा की, जब कि तुर्कों की नौका अथाह राजनीति के समुद्र में किसी चट्टान से टकरा कर चूर हुआ चाहती थी। उस नाव के मूर्ख मल्लाहों को धता बता कर वीर मुस्तफा ने बलपूर्वक उनसे पतवार छीन कर अपने हाथ में ली और भयंकर राजनीतिक तूफान, आँधी, आदि से रक्षा कर सगर्व अपनी विजय-वैजयन्ती उसपर फहरा दी।

मुस्तफा के पूर्वज रुमेलिया के रहनेवाले थे। उसके माता पिता एक साधारण स्थिति के गृहस्थी थे। उसके पिता सैलोनिका में रहते थे। पिता का नाम था अलीरजा और माता का नाम जुबेदा। अलीरजा, सैलोनिका बन्दरगाह में चुंगी विभाग मे क्लर्की करता था। तनख्वाह बहुत मामूली थी और वह भी समय पर नहीं मिलती थी। ऐसी स्थिति में निर्वाह बड़ी मुश्किल से होता था। अलीरजा कभी-कभी व्यापार भी करता था, जिससे गुजर बशर हो जाया करता था। कमाल की माता श्रीजुबेदा एक किसान की लड़की थी। किसान की पुत्री होने के कारण वह हृष्टपुष्ट, बलिष्ठ और स्वस्थ थी। सांसारिक ज्ञान उसे बहुत ही अल्प था। पढ़ी लिखी बिलकुल न थी,—'अलिफ' भी नहीं जानती थी। इतना होने पर भी वह देशभक्त, धर्मात्मा और पुराने विचारों की अनुयायिनी थी। जुबेदा में एक खास गुण था कि वह दूसरों पर अपना प्रभुत्व सहज और शीघ्र ही जमा लेती थी। सत्ताधारियों का सा जो गुण उसमें था, उसका विकसित स्पष्ट प्रतिबिम्ब उसके पुत्र मुस्तफा में दिखाई पड़ता था।

जुबेदा के गर्भ से मुस्तफा का जन्म सन् १८८० ई० में हुआ। जिस समय मुस्तफा पैदा हुआ, उस समय जुबेदा की उम्र कोई २० वर्ष की होगी। मुस्तफा से पहले दो बच्चे और हो चुके थे। एक लड़का और एक लड़की। लड़का जो सबसे पहले पैदा हुआ था मर गया। लड़की जिसका नाम मकबूला था, वह थी। इस प्रकार मुस्तफा अपनी माता का पहला ही पुत्र था। जुबेदा अपने इस पुत्र का बहुत ही लाड़-चाव करती थी। वह उसे देख-देख कर जीती थी। उसके बिना वह बड़ी बेचैन हो जाती थी। यद्यपि माता दिलोजान से मुस्तफा को प्यार करती थी, किन्तु मुस्तफा पर उसका कुछ भी प्रभाव नहीं होता था। औंधे घड़े पर पानी की तरह उसके मन पर जुबेदा के प्रेम का कुछ भी प्रभाव नहीं होता था। लाड़ले बेटों की तरह वे सदैव मुहँ फुलाए रहते थे। वे घुन्ने थे—गुमसुम रहते थे। किसी से भी प्रेम नहीं करते थे। उनकी माता बेचारी उनके प्रेम में दीवानी सी होकर उन्हें दुलराया करती, परन्तु वे अपनी माता से कुछ भी प्रेम नहीं रखते थे। उन्होंने सोच लिया कि—"माता का फ़र्ज प्रेम करना है, सो वह करती है। इसमें नवीनता भी क्या है? हरेक माता अपने बच्चों से स्नेह रखती है। पशु-पक्षी भी अपने बच्चों को जी जान से प्रेम करते हैं, फिर वह तो मनुष्य है।" आप लाड़-प्यार में पले होने के कारण अपनी माता का कहना बिलकुल नहीं मानते थे और यदि कहीं माता ने किसी अपराध पर एकाध चाँटा जमाया तो फिर बुरी तरह बिखर पड़ते थे। गुस्से में भिन्ना उठते थे। बालक मुस्तफा कभी बच्चों के साथ नहीं खेलता था। अकेले ही गम्भीर मुखमुद्रा बनाए खेला करते थे। वे किसी भी

चालक से अपना कुछ सम्बन्ध नहीं रखते—किसी से मित्रता नहीं करते ।

मुस्तफा के पिता अलीरजा ने नौकरी से स्तीफा देकर लकड़ी का कारोबार शुरू कर दिया । पिता की बड़ी इच्छा थी कि मेरा बेटा एक प्रसिद्ध व्यापारी बने और माता चाहती थी कि उसे मुल्ला बनाया जाय । मुस्तफा को पहले कुरानशरीफ पढ़ाया गया और फिर मदरसे में पढ़ने बिठाया । आरम्भिक शिक्षण भी पूर्ण नहीं होने पाया था कि अलीरजा इस लोक से चल बसे । पिता के मरते ही घोर आर्थिक संकट सामने आया । वे घर में छदाम छः कौड़ी भी नहीं छोड़ गए । जुबेदा बेचारी अपने पुत्र मुस्तफा को लिए अपने पीहर में भाई के पास जाकर रहने लगी । देहात में मुस्तफा को अपने मामा के यहाँ रहना पड़ा । पढ़ना लिखना बन्द हो गया । ग्रामीण धन्धे करने पड़े । उन्हें तबेले की सफाई करनी पड़ती थी । ढोरों को चारा डालना, उन्हे पानी पिलाना और जंगल में चराने ले जाना पड़ता था । खेतों में जाकर कौए उड़ाने पड़ते थे । यह काम आपके लिए अत्यन्त हितकर हुआ । यदि मुस्तफा सैलोनिका में रहते तो बहुत सम्भव था कि वे दुबले पतले और निर्बल अशक्त रह जाते । सैलोनिका में जब तक वे रहे अत्यन्त कमजोर दिखाई पड़ते थे । परन्तु ननसार पहुँचते ही वे मजबूत, बलिष्ठ और स्वस्थ दिखाई पड़ने लगे । देहात और जंगल के संयोग ने उन्हें और भी अधिक घुन्ना और एकान्तप्रेमी बना दिया । इस एकान्तवास से बड़ा भारी लाभ यह हुआ कि मुस्तफा में उत्तरोत्तर स्वातन्त्र्य प्रेम की वृद्धि होती गई ।

यद्यपि मुस्तफा साहब को जैसा सैलोनिका था, वैसा ही यह

देहात भी रहा, तथापि उनकी माता अपने पुत्र के इस जंगली-जीवन से अत्यन्त दुखी थी। वह तो अपने बेटे को खूब पढ़ा लिखा कर 'मुल्ला' बना देने के स्वप्न देखा करती थी। मुस्तफा को देहात में रहते-रहते दो साल हो गए, मगर शारीरिक उन्नति के अतिरिक्त बौद्धिक उन्नति कुछ भी नहीं हुई। जुबेदा ने अपनी एक बहिन को बहुत ही अनुनय विनय के बाद इस बात पर राजी कर लिया कि वह मुस्तफा को पढ़ाने लिखाने के लिए खर्च दे दे। वह किसी भी तरह पढ़ा लिखा कर अपने बेटे को योग्य बनाना चाहती थी—वह उन्हें गड़रिया या घसकट्टा देखना नहीं चाहती थी।

मियाँ मुस्तफा जंगल के स्वतन्त्र मनोनीत वातावरण में रह कर और भी उद्दण्ड हो गये थे। हट्टाकट्टा, मजबूत, तन्दुरुस्त शरीर हो गया था। उनकी नीली पीली आँखें और भूरे भूरे बाल शरीर की सुन्दरता को बढ़ाते थे। अपनी माता की आज्ञा मानना तो वे सीखे ही नहीं थे। हाँ, गाँव में रह कर वे इतने ज्याद: उच्छृङ्खल जरूर हो गए कि अब अपनी माता की बातों की रत्ती भर भी पर्वाह नही करते थे। बड़ी कठिनता से, कह सुनकर मुस्तफा को एक मदरसे में पढ़ने भेजना शुरू किया। बहुत दिन तक निरंकुश घूमने फिरने वाले स्वतंत्राचारी मुस्तफा को मदरसा जेलखाना मालूम पड़ने लगा। वे देहाती ढंग का व्यवहार वहाँ भी करने लगे। पढ़ने लिखने में टालटूल करने लगे। अपने सह-पाटियों में शेखी मारना, उन पर अपना दबदबा जमाना, मास्टरों से झगड़ा करना उनका खास धन्धा था। इसका यह अर्थ नहीं कि मुस्तफा मूर्ख अथवा मन्द बुद्धि विद्यार्थी था। नहीं, उसकी

बुद्धि कुशाग्र थी, वह पढ़ने मे सबसे तेज था, स्मरणशक्ति तो अद्भुत थी और एक होनहार विद्यार्थी में जो-जो गुण होने चाहिए उसमें विद्यमान थे। परन्तु वह जन्मतः ही ऐसे स्वभाव का था कि उसका वह स्वभाव उन दिनों उसका अवगुण समझा जाने लगा था। अल्हड़पन आप में ज्याद: था और हेकड़ी मारा करते थे। स्कूल के खेलों में आप कभी भी भाग नहीं लेते थे। किसी ने कुछ ऐसी वैसी बातें कही कि मरने मारने को तैयार। सबसे दुश्मनी हो गई। एक दिन अध्यापक ने किसी अपराध पर आप-को शारीरिक दण्ड दिया, बस, फिर क्या था आप बुरी तरह बिगड़ पड़े और उनका सामना भी किया—लात घूँसे भी चलाए। अध्यापक ने और भी पीटा। जब मास्टर पर कुछ वश न चला तब आप गुस्से में झल्लाते हुए स्कूल से भाग गए।

दूसरे दिन मुस्तफा मियाँ मदरसे नहीं गए। बहुत प्रयत्न किया गया कि आप मदरसे जावें, मगर ऐसे अड़ गए कि टस से मस नहीं हुए। उनकी मौसी ने कहा कि अगर इसी मदरसे में पढ़ना है तो मैं खर्चा दे सकती हूँ। दूसरे स्कूल में पढ़ाने के लिए मेरे पास खर्चा नही है। उनकी माता ने उन्हें बहुत डाँटा, धमकाया, डराया, लेकिन मुस्तफा ही तो ठहरे! अपने जन्मजात स्वभाव को कैसे छोड़ते। माता सिर पटक के रह गई, नहीं गए सो नहीं ही गए। अब उनकी माता ने सोच लिया, यह अब नहीं पढ़ेगा, इसलिए इसे एक दूकान करा देना चाहिए। परन्तु उनके चचा ने कहा—"न तो यह दूकान ही कर सकेगा और न पढ़ेगा ही। इसलिए इसे सैलोनिका के सैनिक विद्यालय में भर्ती करा देना चाहिए। वह विद्यालय सरकारी है उसमें यदि इसने उन्नति

की तो कहीं न कहीं फौजी आफिसर बन जावेगा। नहीं तो सिपाहिगीरी से तो पेट भर ही लेगा। वैसे भी इसे फौजी कामों से और बातों से प्रेम भी है। यहाँ से इसे हटा देना चाहिए, ताकि यह रोज की हाय हाय तो मिट जाय।" जुबेदा अपने बच्चे को सिपाही देखना नहीं चाहती थी। वह तो उसे मुल्ला बनाने को उत्सुक थी। परन्तु यह बात मियाँ मुस्तफा को पूरे सोलहों आने—बल्कि सवा सोलह आने ठीक मालूम पड़ी। वे जब अपने पड़ोसी के लड़के अहमद को फौजी पोशाक पहने देखते और सैनिक विद्यालय की पढ़ाई की बातें सुनते, तो मन ही मन न जाने क्या क्या सोचा करते थे। वे यह तो निश्चय ठान चुके थे कि मैं एक अच्छा सैनिक बनूँगा। फौज का अफसर बनूँगा। फौजी ड्रेस पहन कर दूसरों पर हुक्म चलाऊँगा। वे कहते थे मुल्ला-गीरी कोई अच्छा काम नहीं है। रही दूकानदारी, वह तो ईसाई, यहूदी, ग्रीक और अरमेनियन लोगों का काम है। मुस्तफा कदापि दूकानदारी नहीं करेगा।

सैनिक-शिक्षा

अपनी इच्छानुसार मुस्तफा साहब, अपने पिता के एक रिटायर्ड फौजी अफसर मित्र की सहायता से सैनिक स्कूल में शिक्षा प्राप्त करने लगे। आपने अपनी माता से छिपकर मोनास्तर के माध्यमिक सैनिक स्कूल में अपना नाम लिखवा लिया। जब माता को मालूम हुआ तो वह सख्त नाराज हुई, परन्तु उसकी नाराजी की पर्वाह किसे थी। जुबेदा रोके रोके, इतने ही में तो उन्होंने 'कैडेट' की परीक्षा भी पास कर डाली। इस विषय में आप एक अच्छे सैनिक और अत्यंत योग्य व्यक्ति सिद्ध हुए। शिक्षकों के हृदय पर आपने अपनी योग्यता का सिक्का बैठा दिया। यहाँ यह नहीं समझ लेना चाहिए कि वे किताबी पढ़ाई के

मदरसे की अपेक्षा सैनिक स्कूल में सीधे और सरल स्वभाव के होगए होंगे। नहीं, यहाँ भी वही हालत थी। आपका स्वाभिमान और ऐंठ ज्यों की त्यों बनी हुई थी। किसी की क्या मजाल जो आपके खिलाफ कुछ बोल दे। अगर किसी ने कुछ कह भी दिया तो उस बेचारे की आफत आ जाती थी। आपने अपना रौब जमा रखा था। यहाँ भी आप अकेले ही रहा करते थे, किसी से मिलना-जुलना या हिलमिलकर रहना आपको पसन्द नहीं था। सदैव आप इसी चाह में रहते थे कि लोग उन्हे बड़ा आदमी मानें और उनके कामों की जी खोलकर प्रशंसा करें। कोई भी सहपाठी आपसे बोलने का साहस नहीं करता था। क्योंकि न जाने कब वे आपे से बाहर हो जावें—म्यान से निकल पड़ें। वे चौबीसों घण्टे लड़ने को तैयार दिखाई देते थे। फिर भला किसने भाँग खाई जो जानबूझ कर 'आ बैल मुझे मार' करे। कभी कोई उनसे पूछ बैठता कि "मियाँ मुस्तफा साहब ! आखिर तुम चाहते क्या हो ?" वे गुस्से से फौरन जवाब देते "जनाब ! आपको इससे मतलब ? आप काजी या मुल्ला ? आपकी बला से, मैं कुछ भी होऊँ। लेकिन मै आप जैसा होना तो हरगिज नहीं चाहता।"

सैनिक-स्कूल में मुस्तफा एक अद्वितीय विद्यार्थी साबित हुए। कालेज के सभी इम्तहानों में आप विशेषता-पूर्वक उत्तीर्ण हुए। आपकी योग्यता देखकर सभी लोगों को आश्चर्यचकित होना पड़ता था। आप दूसरों को ट्रेनिंग देने में और भी दक्ष सिद्ध हुए। दूसरों पर अपना आतंक जमाने में भी आप अपना सानी नहीं रखते थे। आप द्रोणाचार्य के गुरुकुल में अर्जुन की भांति अपने से, किसी भी विद्यार्थी को आगे बढ़ने देना नहीं चाहते थे।

आप यह बिलकुल नहीं सह सकते थे कि कोई उनकी बरा-बरी करे। यदि कोई विद्यार्थी कभी आपसे योग्य सिद्ध हो जाता तो आप मन ही मन जल भुन कर कबाब हो जाते और उसे अपना प्रतिद्वन्दी मानकर नीचा दिखाने की उधेड़ बुन में लगे रहते। आपके स्वभाव का सारांश यह था कि—"जहाँ मैं होऊँ वहाँ मेरी ही सब बातें मानी जावें और मैं ही सब कुछ रहूँ। जहाँ मैं सब कुछ न माना जाऊँ वहाँ मैं बिलकुल न रहूँ।"

तुर्किस्तान के स्कूलों और कालेजों में परीक्षाओं के लिए उम्र की कैद थी। अर्थात् अमुक परीक्षा में सम्मिलित होने वाले परीक्षार्थी की अमुक उम्र होनी चाहिए, परन्तु मुस्तफा के लिए कोई कैद नहीं रखी गई। इस होनहार नवयुवक के लिए सैनिक परीक्षाओं में निर्धारितवय की कैद नहीं रखी गई। एक के बाद दूसरी परीक्षाओं में सम्मिलत होते गए—तारीफ यह थी कि 'फेल' शब्द तो उनके लिए संसार में था ही नहीं। जिस परीक्षा में बैठे उसी में पास—और सो भी विशेषतापूर्वक। फौजी कामों में आप अपने समय के अप्रतिम विद्यार्थी निकले कवायद परेड भी बड़ी शान्ति और ऐंठ के साथ करते थे।

एक कैप्टेन (Captain) जो मुस्तफा साहब के शिक्षक थे, उनका नाम भी मुस्तफा ही था। उसने अपने शिष्य मुस्तफा को गणित में प्रवीण देखकर 'कमाल' शब्द उनके नाम के साथ और जोड़ दिया। एक बार आपने गणित का उत्तर देकर कमाल कर दिया तभी से आप 'मुस्तफा कमाल' कहे जाने लगे। यह 'कमाल' शब्द अरबी का है जिसका अर्थ है परिपूर्ण, दक्ष, विशारद, पूर्णता इत्यादि। मुस्तफा कमाल आरंभिक सैनिक शिक्षा प्राप्त

करके उच्च शिक्षा पाने के लिये कुस्तुनतुनिया के सैनिक कालेज में अभ्यास करने लगे। उनकी माता ने अनेक प्रयत्न किए कि मुस्तफा फौजी तालीम न लेकर धार्मिक शिक्षा प्राप्त करे और मुल्ला बने, परन्तु उसकी एक भी न चली। मुस्तफा कमाल सैनिक कार्यों में कमाल हासिल करते ही चले गए।

सैनिक शिक्षा के समय मुस्तफा कमाल की स्वाभाविक विशेषताएँ कुछ अधिक विकसित दिखाई पड़ने लगी थीं। वे अपनी बड़ी से बड़ी अभिलाषा को बड़ी ही अच्छी तरह अपने हृदय में छिपाए रह सकते थे। अपनी इच्छा की झलक अपने चेहरे पर भी नहीं आने देते थे। अन्तरंग से अन्तरंग मित्र भी उनके मनोभावों को ताड़ नहीं पाता था। अपने साथियों पर अपना अधिकार जमाए रखना वे अपनी विशेषता समझते थे। उनके साथी भी उन्हें अपना अफसर माना करते थे। जो उनके संसर्ग में रहता उस पर आप अच्छी तरह अपना शासन जमा लेते थे। उनमें अच्छी योग्यता होने के कारण लोग भी उनका सम्मान करते थे। उनके साथी सदा उनके साथ लगे रहते और उनकी आज्ञा पालन करते।

मुस्तफा कमाल कोरे सिपाही नहीं थे, बल्कि वे एक अच्छे साहित्यिक भी थे। इन दिनों आप काव्यरचना भी करते थे। आपके काव्य में वीर और करुण रस की प्रचुरता पाई जाती थी। वैसे तो आप शृङ्गार हास्य आदि रसों से युक्त काव्य भी निर्माण करते थे। मुस्तफा के हृदय में अपने देश और जाति के प्रति अगाध प्रेम और अनन्य श्रद्धा थी। वे स्वच्छन्द, अत्याचारी राजा के विरुद्ध बड़ी ही ओजपूर्ण प्रभावोत्पादक कविता

लिखते थे। अपने विचारों का भी वे स्वदेश कल्याण के निमित्त निर्भयतापूर्वक प्रचार करते रहते थे। उन्होने अपने देश को जगाने और निराश तुर्कों के हृदय मे आशा का स्रोत बहाने का कार्य आरम्भ कर दिया था। कमाल अपने विचारों के एक ही व्यक्ति थे। वे कभी किसी पर अवलम्बित रहना जानते ही नहीं थे। वे जन्मजात स्वावलम्बी और अपनी बुद्धि से काम लेने वाले 'कर्मवीर' थे। उनका प्रभाव दूसरों पर होता था, किन्तु उन पर कोई अपना प्रभाव नहीं डाल सकता था। जब तक वे अपनी निज की तर्क कसौटी पर किसी के विचारों को अच्छी तरह परख नहीं लेते तब तक वे किसी दूसरे के दिखाये मार्ग को स्वीकार नहीं करते थे।

कमाल जबसे कुस्तुनतुनिया के सैनिक कालिज में दाखिल हुए तभी से वे अपने देश और अपनी-जाति की दशा को गहरी दृष्टि से देखकर अध्ययन कर रहे थे। वे देख रहे थे कि टर्की (तुर्किस्तान) कुशाशन के कारण बहुत ही बुरी दशा को पहुँचता जा रहा है। वे यह बात अच्छी तरह अनुभव कर रहे थे कि उनका देश निकट भविष्य में ही संकट के गहरे गड्ढे में गिरने जा रहा है। वे अपने देश की इस दुर्दशा से अत्यन्त बेचैन रहने लगे।

३

क्रान्ति के पथपर

पिछले पृष्ठों को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि मुस्तफा साहब बचपन ही से सैनिकवृत्ति के अनुयायी थे। वे वीर-पूजक थे। आठ दस वर्ष की अवस्था में जब ये किसी तुर्क सैनिक को वर्दी पहने देखते तो उस पर बड़े ही प्रसन्न होते। वे सैनिक बनना चाहते थे। बाबू बनने से इन्हें अत्यन्त घृणा थी। अपनी बाल्यकाल की संचित इच्छाओं और संस्कारों के बल पर अपने पुरुषार्थ द्वारा वह एक देश प्रेम का दीवाना बना—दीवाना भी कैसा? जिसका सानी मिलना भी कठिन है। जिसने अपने देश की ऐन मौके पर जब कि वह नष्ट किया जाने वाला था, रक्षा की।

इन दिनों जुबेदा ने अपना विवाह एक धनी सौदागर से कर लिया। कमाल ने अपनी माता के इस काम की निन्दा की और उससे अलग हो गया। अपनी माता से सम्बन्ध-विच्छेद हो जाने के कारण अब जब कभी वह छुट्टी पाता, सैलोनिका चला जाता। वहाँ फैथी नामक एक व्यक्ति से मित्रता हो गई। फैथी फ्रांसीसी भाषा अच्छी जानता था, अतएव मुस्तफा ने उससे फ्रांसीसी सीखना आरम्भ कर दिया।

देश की दुरावस्था देखकर इन्हें भावी सङ्कट बहुत ही निकट जान पड़ने लगा। भला ऐसे समय में एक देशभक्त नौजवान कैसे चुप बैठ सकता है! मुस्तफा सङ्कट के प्रतीकार के उपाय सोचने में रात दिन निमग्न रहने लगे। इन्हें जो उपाय सूझे वे एक दम क्रान्ति उत्पन्न कर देने वाले थे। अपने मित्र फैथी के साथ क्रान्तिकारी पुस्तकें पढ़ीं। दोनों क्रान्तिकारी साहित्य के कीट बन गये। वाल्टेयर, हाब्स, जान स्टुअर्ट मिल, रूसो आदि क्रान्तिकारी साहित्य निर्माताओं के ग्रन्थों का इन्होंने धर्मग्रन्थों की तरह अध्ययन किया। यद्यपि टर्की में इन पुस्तकों का पढ़ना कानूनन मना था, तथापि जब्त पुस्तकें इन्होंने पढ़ीं और खूब पढ़ीं। इन्होने 'वतन' नामक एक जब्त नाटक भी पढ़ा, जिसका इन पर बड़ा ही गहरा प्रभाव हुआ। इन्हें जब्त पुस्तकों के पढ़ने में विशेष आनन्द इसलिए भी आता था कि वे शासकों द्वारा जब्त थीं और जिनके पास जब्त साहित्य मिल जाता, उन्हें जेल में ठेल दिया जाता था।

मुस्तफा अपने भावी कार्यक्रम की भूमिका लिख रहे थे। वे क्रान्तिकारी लेख लिखते थे। नवयुवकों के हृदय में स्वातंत्र्य

की आग भड़का देने वाली जोशीली कविताएँ रचते थे। उन्होंने कई छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ लिखीं, जिनमें तुर्किस्तान के सुलतान के अत्याचार, अनाचार का वर्णन करते हुए देश की आजादी के लिए विदेशियों के पंजों से अपने मुल्क को बचाने के लिए अपील होती थी। इन्हीं दिनों कमाल ने व्याख्यान देने का अभ्यास भी शुरू कर दिया था। वह देश के युवकों से—तरुण तुर्किस्तान से अपने देश की आजादी के लिए तैयार होने के लिये बारम्बार कह रहा था।

इन दिनों कमाल कोई १९-२० वर्ष का जवान था। शरीर सुन्दर सुडौल था। न मोटे ही थे और न दुबले ही। सब अंग हृष्ट-पुष्ट दिखाई देते थे। शरीर की मांसपेशियाँ भी गठी हुई थीं। चेहरे पर की हड्डियाँ उभरी हुई और आँखें नीली एवं नुकीली थीं। बाल भूरे थे। ओठों पर मूछों की रेखाएँ दिखाई पड़ने लगी थीं। भुजाएँ लम्बी और अँगुलियाँ पुष्ट थीं। स्वस्थ शरीर के अन्दर स्वस्थ मन वाला यह जवान अपने देश की दीन दशा हटाने को तैयार न होता तो और कौन होता! कमाल अभी कुस्तुनतुनिया विश्वविद्यालय की पढ़ाई समाप्त नहीं करने पाये थे कि वे क्रान्तिकारी बन गये। देश की आवश्यकताओं के आगे उन्होंने अब ग्रेज्यूएट बनकर डिप्लोमा (सनद) प्राप्त करने तक ठहरना उचित नहीं समझा। उन्होंने अब यह निश्चय कर लिया कि वर्त्तमान टर्की की सरकार को षड्यन्त्र द्वारा नष्ट करके नवीन सरकार स्थापित की जाय।

मुस्तफा ने अपने मित्रों पर अपने क्रान्तिकारी विचार प्रकट किये और अपनी इच्छा जाहिर की। वे मुस्तफा को हृदय से

चाहने वाले और उनके कार्यों के साथ सहानुभूति रखने वाले थे। उन्होंने मुस्तफा की बातें मान लीं और एक क्रान्तिकारिणी गुप्त संस्था कायम कर दी। सैनिक कालेज में जितने भी नवयुवक शिक्षण प्राप्त कर रहे थे, वे प्रायः सभी क्रान्तिकारी थे। ये सभी सुलतान के शासन और उसकी अकर्मण्यता के विरोधी थे—कोई भी अपने देश में विदेशियों का हस्तक्षेप नहीं चाहता था। अनुकूलता इन्हें इतनी प्राप्त थी कि कालेज के अध्यापक और दूसरे अधिकारी वर्ग भी इनकी संस्था के साथ सहानुभूति रखते थे। विद्रोहियों की बातों को, उनके कामों को जानबूझ कर टाल जाते थे। खुल्लमखुल्ला उन्हें मदद नहीं करते थे तो उनके कामों में आड़े भी नहीं आते थे।

कालेज में 'वतन' नामक एक क्रान्तिकारी गुप्त संस्था पहले ही से स्थापित थी। इस संस्था में गुप्त रीति से विचार, भाषण प्रचार आदि कार्य होते रहते थे। इसी संस्था से एक हस्तलिखित पत्र भी प्रकाशित होता था जो चुपचाप हजारों मनुष्यों तक पहुँच जाया करता था। इसमें पुराणवाद की धज्जियाँ उड़ाई जाती थीं। सुलतान के खिलाफ और उसकी शासन-प्रथा के खिलाफ करारे लेख रहते थे। अधिकारियों के जुल्म और दमन की कड़ी आलोचना की जाती थी। मुल्ला और मौलवियों की धूर्त्तता का भण्डाफोड़ किया जाता था। क्रान्तिकारियों का पत्र ही तो ठहरा, उसमें इस्लाम की भी खबर ली जाती थी। उसमें बतलाया जाता था कि मजहबी मूढ़ एवं अन्धविश्वास किस तरह देश का गला दबोचे हुए हैं? मस्जिदें और दरवेश किस प्रकार देश के लिए घातक बन गए हैं? कुरान-शरीफ के

आधार पर बनाई हुई नीति एकदम रद्दी और बहुत पुरानी है। सारांश यह कि 'वतन' के द्वारा चौमुखी क्रांति का श्रीगणेश किया गया। उसके मुख पत्र में सामाजिक, नैतिक, धार्मिक और राष्ट्रीय सभी प्रकार की क्रान्ति के पोषक लेख विद्वान और अधिकारी लेखकों द्वारा गुप्त नामों से लिखे जाते थे।

इस क्रांतिकारिणी संस्था का मुख्य उद्देश्य था "सुलतान की स्वेच्छाचारिणी सत्ता को हटाकर उसकी जगह लोकप्रिय पार्लामेण्ट के रूप में वैध-शासन स्थापित करना। पुरुषों को मुल्ला-मौलवियों के पंजों से और औरतों को पर्दे के जंजाल से बचाना।" इस संस्था के संचालकों का विश्वास था कि यदि टर्की के शरीर से नवीन रक्त नहीं उत्पन्न किया गया तो यह निस्सन्देह मर जावेगा। सुलतान और उसकी खुफिया पुलिस देश को बर्बाद करने में सहायक बन रहे हैं। इत्यादि।

मुस्तफा कमाल के निर्भीकता आदि गुणों के कारण वे 'वतन' संस्था के सभापति बना दिए गए। आपके हाथ में संस्था के आते ही काम बड़े जोरों से चलने लगा। मुस्तफा टर्की में नवजीवन उत्पन्न करना चाहते थे। वे मन, वचन और कर्म से अपने देश की सेवा में पिल पड़े। उन्होंने संस्था के पत्र में गर्म-से-गर्म, खून में उबाल लाने वाले लेख और कविताएँ लिखीं। भाषण में तत्कालीन शासन की कटु आलोचनाएँ कीं। कमाल ने अपने जीवन का प्रत्येक क्षण देश की भलाई में खर्च करना आरम्भ कर दिया। अपने गुजर के लिए उन्हें कोई चिन्ता थी ही नहीं, क्योंकि उनकी माता जुबेदा खर्च के लिए कुछ-न-कुछ भेज ही दिया करती थी। वे अपनी माता से

नाराज थे, किन्तु माता का हृदय तो "माता का हृदय ही होता है।" चिरकाल तक संस्था के संचालक रह कर मुस्तफा कमाल साहब ने बहुत अनुभव प्राप्त कर लिए। क्रांतिकारी संगठन किस प्रकार किया जा सकता है, इसका पूरा-पूरा ज्ञान प्राप्त कर लिया। गुप्त सभाओं को गुप्त स्थानों में स्थापित करना, सभा के सभासदों की परीक्षा लेना, शपथ कैसे दिलाना, कोडवर्ड और पासवर्ड संकेत वगैरः निर्माण करना उन्होंने अच्छी तरह सीख लिया।

जेल और निर्वासन

मुस्तफा कमाल अपने उद्देश्य की पूर्ति में जी-जान से संलग्न थे। उधर सुलतान भी चुप नहीं था। उसने टर्की में खुफिया पुलिस का जाल सा पूर रखा था। वह जो कुछ भी शासन-कार्य चलाता था, वह खुफियाओं के भरोसे पर! गुप्तचरों की संख्या बहुत ज्याद: थी। कहीं भी तीन आदमियों से चौथा गुप्तचर ही पाया जाता था। मुस्तफा इन लोगों से बेखबर नहीं थे, बड़े ही सतर्क रहते थे, किन्तु गुप्तचर भी कुछ कम नहीं थे। उन्होंने अन्त में इस संस्था का पता लगा कर ही छोड़ा। जब सुलतान को मालूम हुआ तो उन्होंने कोई गिरफ्तारी या किसी दूसरी तरह की सख्ती नहीं की, बल्कि-

कालेज के अधिकारियों के नाम चेतावनी भेज दी और साथ ही यह भी लिखा गया कि "कालेज के कुछ विद्यार्थी राजविद्रोहात्मक कामों में सम्मिलित हैं—इसलिए उन लोगों का पता लगाकर उन्हें सजा दे दी जावे और आयन्दा ऐसे विद्रोह-कार्य करने वालों पर नजर रखी जावे तथा कठोर दण्ड भी दिया जावे।"

सुलतान की इस आज्ञा का मुस्तफा और उनकी संस्था पर कुछ भी प्रभाव नहीं हुआ। हाँ, इतना जरूर हुआ कि पहले की अपेक्षा अब विशेष सतर्कता से काम किया जाने लगा। अब भी उनमें वही लगन, वही उत्साह और वही गति दिखाई पड़ती थी।

सैनिक कालेज ने मुस्तफा कमाल को फौज में सेनापति का पद देकर सम्मानित किया। वे अब लेफ्टीनेण्ट हो गए। परन्तु इस सरकारी नौकरी का उनके मन पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। वे शरीर से सुलतान के नौकर बन गए लेकिन मन से अपने देश के अन्यतम सेवक बने रहे। शरीर गुलामी की वर्दी पहनता था किन्तु उनका मन स्वतंत्रता के निर्मल वातावरण में स्वच्छन्द एवं निर्भय भ्रमण करता था। वह लेफ्टीनेन्ट हो गए तो क्या ? उन्होंने अपना गुप्त आन्दोलन बन्द नहीं किया। अब 'वतन' नामक अपनी गुप्त संस्था का दफ्तर इस्तम्बोल नामक नगर में स्थापित कर उसका कार्य सुचारु रूप से चलाने लगे।

पुलिस तो मुस्तफा साहब के पीछे सतुआ बाँध कर पड़ी हुई थी। खुफिया विभाग के एक व्यक्ति ने अपना नाम इस गुप्त संस्था में लिखा लिया और अपने को मुस्तफा साहब से

भी अधिक गर्म जाहिर किया। वह सुलतान के विरुद्ध खूब जहर उगलता था, और वर्त्तमान शासन-प्रणाली को नष्ट करके दूसरी सरकार शीघ्र ही स्थापित हो जाने के लिए आतुरता प्रकट करता था। मुस्तफा इसकी चालाकियों को न ताड़ सके। जब उसने देख लिया कि संस्था के सभासद कोई भी अब उस पर सन्देह नहीं रखते, तब एक दिन वह वहाँ पुलिस को ले आया और धोके से संस्था के कई सदस्यों को गिरफ्तार करा दिया। इनमें मुस्तफा कमाल भी गिरफ्तार हुए। सुलतान ने इन लोगों को यिल्डीज बुलाया और वहाँ के कोर्ट में इन पर राजद्रोहात्मक संस्था के संचालक बनने का अपराध लगाया गया। अपराधी सिद्ध होने पर इन्हें इस्तम्बोल की लाल जेल में भेज दिया गया। जब मुस्तफा की माता को अपने पुत्र की सजा का हाल मालूम हुआ तो वह बहुत ही घबराई और अपनी बहन के साथ जेल में मिलने की इच्छा से वहाँ पहुँची, परन्तु अधिकारियों ने मिलने नहीं दिया।

जेल में पहुँच कर मुस्तफा का जोश ठण्डा नहीं पड़ गया, बल्कि खून में और तेजी का उफान आया। सुलतान् की सरकार ने सोचा होगा कि जेल के कष्टों से घबरा कर मुस्तफा आयन्दा राजद्रोहात्मक कार्यों में भाग नहीं लेगा, परन्तु इसका परिणाम उल्टा ही हुआ। उनके हृदय में और जोरों से स्वातंत्र्य प्राप्ति की ज्वाला धधकने लगी। जेल के कष्टों की आग में तप कर मुस्तफा कमालरूपी स्वर्ण कुन्दन की भाँति चमकने लगा। जो पापी होते हैं, या जो सच्चे अपराधी होते हैं उनको जेल भयप्रद स्थान हो जाता है किन्तु जो पवित्र, निरपराध, सच्चे और

अपनी मातृभूमि के सच्चे सपूत होते हैं, उन्हें जेल और भी आगे कदम बढ़ाने का साहस और धैर्य प्रदान करता है। जेल में रह कर मुस्तफा और भी उद्दण्ड और स्वतंत्र विचारों वाले बन गए।

तीन महीने तक मुस्तफा कमाल को जेल की कोठरी में रहना पड़ा। सरकारी अधिकारियों की उनके प्रति हार्दिक सहानुभूति थी। एक दिन कमाल जेल के पास ही युद्ध के आफिस में ले जाए गए। वहाँ इस्माइल हाकी पाशा नामक व्यक्ति ने उनसे कहा—

"तुम एक योग्य व्यक्ति हो, सब लोग तुम्हें दिल से चाहते हैं। अगर तुम सरकारी नौकरी ईमानदारी और नमकहलाली के साथ करो तो एक दिन तुम बड़े आदमी बन सकते हो। इस तरह क्रान्तिकारी बनना तुम्हारा फर्ज नहीं था। तुमने अपने सैनिक पद को कलङ्कित बना लिया है। सरकारी सेना के अफसर ही अगर तुम्हारी तरह बगावत में सम्मिलित हो जावेंगे तब सुलतान सलामत किस पर भरोसा रख सकेंगे? तुमने कमीने और देशद्रोहियों के साथ रह कर अपने को बुरी तरह बर्बाद कर लिया है। राजद्रोह सब से बढ़ कर कलंक की बात है। अब तुम पर विश्वास ही कौन लावेगा? तुमने स्वयं अपनी सरकार के साथ विश्वासघात किया और अपने साथियों को भी इसके लिए उभारा। राज्यक्रान्ति के षड्यंत्र में सम्मिलित होकर तुमने अपने पाँवों पर अपने ही हाथों पत्थर पटक लिया है। तुम एक नवयुवक हो। मुश्किल से २०—२२ वर्ष की उम्र होगी। मुझे तुम पर तरस आता है। अगर तुम अब भी

अपनी वेवकूफी से बाज आ जाओ तो सुलतान सलामत तुम्हारे ऊपर कृपा करने को तय्यार हैं। मैं जानता हूँ और अच्छी तरह जानता हूँ कि वास्तव में तुम बड़े ही भले और समझदार हो, बशर्त्ते कि तुम्हारे अंदर से जिद्द और उद्दण्डता निकाल दी जावे।"

कमाल स्वभाव के घुन्ने तो थे ही, हाकीपाशा की सब बातों को चुपचाप पी गए। उन्होंने न तो उसकी बातों पर कोई दुःख ही प्रकट किया और न प्रसन्न ही हुए। उनका अपने मन पर इतना अधिक आधिपत्य था कि अपनी इच्छा, बिना उचित अवसर पाए कदापि प्रकट नहीं होने देते थे। उनके जीवन की इस विशेषता ने ही उन्हें सर्वत्र विजयी बनाया। यदि मुस्तफा कमाल की जगह कोई दूसरा व्यक्ति होता तो वह इन चिकनी-चुपड़ी बातों में आकर क्षमा माँग लेता या उसकी बातों का कटु वचनों द्वारा विरोध करता। दोनों ही बातें घातक बन जातीं; परन्तु कमाल का चुप्पी साध जाना हाकीपाशा के लिए एक विचित्र पहेली बन गया। वह कुछ भी अनुमान नहीं लगा सका कि आखिर मुस्तफा के दिल में क्या है ?

हाकीपाशा की बातचीत राजनीतिक, स्वार्थ पूर्ण, दाँव-पेंच से भरी हुई थी। सुलतान की सरकार एक ढेले में दो शिकार खेलना चाहती थी। वह इस्तम्बोल से मुस्तफा कमाल को किसी भी वहाने हटाकर किसी सुदूर स्थान में निर्वासित कर देना चाहती थी; परन्तु साथ ही वह इनकी गम्भीर मुद्रा और अथाह हृदय से भी भयभीत थी। उसे रात दिन इस बात का भय रहता था कि यदि मुस्तफा को दण्ड देकर कहीं आजाद रहने का अवसर दे दिया तो वह भयंकर आग लगा देगा, जिसका बुझाना

कठिन हो जावेगा। यह सोच कर सुलतान उसे सरकारी नौकरी पर ही कहीं भेज देना चाहता था। संयोगवश इन्हीं दिनों डायस्कस में बगावत के लक्षण दिखाई पड़ रहे थे। सुलतान ने इन्हें किसी भी बहाने वहाँ भेज देने का तय कर लिया था। हाकीपाशा ने मुस्तफा कमाल से कहा:—

"सरकार तुम्हें फिर अपनी नौकरी पर लेना चाहती है और तुम्हें तुम्हारा ओहदा देती है। तुम्हें डायस्कस की अश्वारोही सेना का लेफ्टीनेन्ट बनाया जाता है। तुम्हें वहाँ अपनी इन हरकतों से बाज आना चाहिए। ऐसी बेवकूफी और बेहूदगी अगर आयन्दा तुमसे हुई तो याद रखो तुम्हें अब फिर कभी मौका न दिया जायगा और सरकार के जी में जो आवेगा वैसा ही वह सख्त-से-सख्त व्यवहार तुम्हारे साथ करेगी। तुम अपने कामों को सरकारी वफादारी तक ही सीमित रखो। इसे तुम अपने लिए सरकारी आखिरी कृपा समझो।"

यह सब सुनकर भी मुस्तफामियाँ तो गुमसुम ही थे। कुछ भी नहीं बोले। उसी रात को सीरिया जाने वाले एक जहाज में मुस्तफा को पुलिस ने बिठा दिया। उन्हें किसी मित्र से अथवा उनकी माता मौसी आदि किसी से भी नहीं मिलने दिया गया। सुलतान ने सन् १९०२ ई० मे सीरिया जैसे एकान्त प्रदेश में भेज कर समझ लिया कि "चलो सिर की बला दूर हुई।" परन्तु वे तो गजब की बला थे, सहज ही टल जाने वाले नहीं थे। अस्तु—

जहाज ने लगातार अस्सी दिन की यात्रा करके सीरिया के निकट अपना लंगर डाला। मुस्तफा जमीन पर उतरे और

अपना घोड़ा लेकर अपनी सेना में पहुँच गए। अपने पद पर फौजी काम करने लगे। वहाँ पहुँचने पर उन्हें ज्ञात हुआ कि सेना डूनेज पर आक्रमण करने को तैयार हो चुकी है। उन्हें भी सेना के साथ जाना पड़ा। बागी लोगों को भगा कर उनके खाली गाँवों में आग लगा दी। खेतों को उजाड़ कर चौपट कर दिया इस प्रकार सहज हो डूनेज-दमन करके कमाल डायरफस वापस लौट आए।

५

फिर वही रफ्तार

डायरफ़स जैसे एकान्त स्थान में भी कमाल अपने कर्त्तव्य से नहीं हटे। यहाँ भी उन्हें एक अपने विचार का आदमी मिल ही गया। यह व्यक्ति भी राजद्रोह के अभियोग में अपराधी ठहरा कर निर्वासित कर दिया गया था। ये दोनों एक और एक मिलाकर दो नहीं हुए बल्कि एक और एक ग्यारह बन गए। इन दोनों ने यहाँ पर भी 'वतन' संस्था की शाखा रूप में 'स्वतंत्रता की समिति' की स्थापना कर डाली। जेल की काल कोठरी, हाकीपाशा की धमकियाँ और निर्वासन कमाल के मन पर रंचमात्र भी प्रभाव न कर सके। मुस्तफा कमाल गर्भ से ही क्रान्तिकारी पैदा हुए थे। जहाँ-जहाँ वे पहुँचे उन्होंने

क्रान्ति की उद्दाम धारा प्रवाहित कर राजतंत्र की गन्दगी को बहाने का पूर्ण प्रयत्न किया। क्या घर क्या बाहर, धर्म में समाज में, राष्ट्र मे सर्वत्र उन्होंने क्रान्ति का शंख फूँका। वे अपने घर के लोगों से झगड़े, बाहर के लोगों से झगड़े, धार्मिक विश्वासों को मूर्खता पूर्ण कार्य बतलाया और सरकार का तख्त लौटने में कटिबद्ध हुए। उन्हें ईश्वर में बिलकुल आस्था नहीं थी और न वे किसी मनुष्य या संस्था में ही विश्वास लाते थे। रात दिन उनके सिर पर एक ही बात का भूत सवार था कि "टर्की को किस प्रकार रक्षा की जाय!" वे देश की दशा सुधारने में ही दीवाने की तरह मस्त रहते थे। पहले की अपेक्षा अब वे विशेष धीर, गम्भीर और उदात्त चित्त होते जा रहे थे।

आपने अब लिखना पढ़ना बन्द सा कर दिया था। लेख लिखने में या कविता बनाने में अब वे अपना समय खोना उचित नहीं समझते थे। उन्होंने अनुभव किया कि क्रान्ति का संगठन और साहित्य निर्माण—एक म्यान में दो तलवारें नहीं रह सकतीं। जो व्यक्ति नेता बनकर किसी ठोस कार्य को करना चाहता हो, उसके द्वारा साहित्य निर्माण, उसकी शक्ति को कम कर देता है। वह जोश जो उसके हृदय में भरा होता है, लेखनी के द्वारा कागज पर रख देने से हलका पड़ जाता है। मुस्तफा का यह निश्चय अनुभव था कि साहित्य से इच्छाशक्ति और निर्णय करने की सामर्थ्य में निर्बलता आ जाती है। उन्होंने एक दम अपनी साहित्यिक वृत्तियों का संवरण कर लिया—लेखनी को चिर विश्राम दे दिया और अपनी सारी शक्तियों को

केन्द्री भूत कर क्रान्ति के संगठन करने तथा कार्यान्वित करने में लगा दी।

डायस्फस में भी मुस्तफा ने कमाल की सफलता प्राप्त की। यहाँ के सरकारी अधिकारी प्रायः सभी क्रान्तिकारी विचारों के थे। जो स्वयं क्रान्तिकारी नहीं थे वे उसके विरोधी भी नहीं थे। ऐसी अनुकूल परिस्थिति में मुस्तफा की क्रान्तिकारिणी गुप्त संस्था खूब फली फूली। सदस्यों की संख्या धड़ल्ले से बढ़ी। समस्त सीरिया में इस संस्था के सदस्य दिखलाई पड़ने लगे। जेरूसेलम, बेरूर, जफा, आदि बड़े-बड़े नगरों में इसकी शाखा-सभाएँ स्थापित हो गईं। यद्यपि सारे सीरिया में क्रान्ति का ज्वार आ गया परन्तु क्रान्ति न हो सकी। कारण यह था कि जनता क्रान्ति के लिए अभी पूरी तरह से तैयार नहीं थी, केवल फौज ही क्रान्ति चाहती थी। ऐसी एकाङ्गी क्रान्ति को मुस्तफा ने ठीक नहीं समझा।

डायस्फस को क्रांति के लिए अच्छा, उपयुक्त स्थान न देख कर कमाल ने सैलोनिका पहुँचने का इरादा किया। उनकी नजर में सैलोनिका ही अपने लक्ष्यवेध का उत्तम क्षेत्र जँचा। सीरिया के नवयुवकों में उन्होंने वह लगन नहीं देखी जो सैलोनिका वालों में देखी थी। फौजी अफसरों की सहायता से मुस्तफा चुपचाप सैलोनिका में आ पहुँचे। यद्यपि मुस्तफा सैलोनिका में थे, तथापि डायस्फस के फौजी अफसर अपने पत्रों में सुलतान की सरकार को यही मुगालता देते रहे कि मुस्तफा कमाल डायस्फस में ही है और ईमानदारी से अपना काम कर रहा है।

मुस्तफा कमाल को सीरिया से निकल कर सैलोनिका में पहुँचने में अनुकूल परिस्थिति ने खूब सहायता दी। सीरिया के जाफा नामक बन्दरगाह का कमाण्डेण्ट अहमदबे 'वतन' नामक गुप्त समिति का मेम्बर था। वह समिति के सर्वेसर्वा मुस्तफा साहब को सब प्रकार की सहायता और सुविधाएँ देना अपना कर्त्तव्य मानता था। मुस्तफा कुछ दिनों की छुट्टी लेकर जाफा पहुँचे और बंदरगाह के अधिकारी से मिले।

६

नाम और वेष बदला

देश की आजादी के दीवाने मुस्तफा कमाल साहब ने बन्दरगाह के कमाण्डेण्ट से अपने विचार प्रकट किए। उसने आपकी जी-जान से मदद करने की प्रतिज्ञा की। सब कुछ निश्चित हो जाने पर मुस्तफा ने अपना नाम "कालीपासबनोपा" रखा और सौदागर का वेष बना लिया। कमाण्डेण्ट ने उन्हें ईजिप्ट जाने वाले जहाज पर सवार कर दिया। ईजिप्ट से ये एथेन्स पहुँचे और वहाँ से सैलोनिका पहुँच गए। इस यात्रा से उनका साहस और उत्साह, यह देखकर और भी बढ़ गया कि सर्वत्र तुर्की साम्राज्य में क्रान्ति की लहर उठ रही है और जगह-जगह गुप्त क्रान्तिकारिणी संस्थाएँ भी चल रही हैं। वे

चुपचाप अप्रकट रूप से सैलोनिका में पहुँचे। वहाँ वे अपनी माता के घर में छिप कर रहने लगे। उनकी माता का दूसरा पति भी मर चुका था। यहाँ उन्होंने देखा कि सैलोनिका क्रान्ति का विशाल केन्द्र बना हुआ है। यहाँ के सरकारी अफसर भी क्रान्ति की अन्दर-ही-अन्दर भयंकर तैयारी में जुटे हुए थे। शुक्रीपाशा नामक एक देशभक्त व्यक्ति इन दिनों सैलोनिका का गवर्नर था। यह बड़ा ही सज्जन और उच्च विचारों का व्यक्ति था। यह मुस्तफा कमाल के विचारों का पोषक था। मन-ही-मन उनके कार्य से बहुत सन्तुष्ट था। मुस्तफा ने अपनी माता और कालेज के सहपाठियों की सहायता से शुक्रीपाशा के पास एक पत्र भेजा जिसमें उन्होंने अपने विचारों को विस्तार-पूर्वक प्रकट किए थे। संक्षेप में अपने भावी कार्यक्रम को भी उन्होंने प्रकट कर दिया और डायस्फस से सैलोनिका में तबादिले पर बुला लेने की प्रार्थना की।

पत्र को देखते ही शुक्रीपाशा के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। पत्र-लेखन की शैली और तर्कों को देखकर पाशा साहब को दाँतों तले अँगुली दबानी पड़ी। मुस्तफा ने इनसे अपने कार्य में सहायता माँगी थी, परन्तु वे बेचारे विवश थे। उन्होंने अपने एक भरोसे के वृद्ध मित्र के द्वारा उन्हें कहला भेजा कि सब तरह से मैं मदद करने को तैयार हूँ; परन्तु प्रकट रूप में मैं कुछ भी नहीं कर सकूँगा। इन्हीं दिनों किसी प्रकार खुफिया पुलिस को मुस्तफा का सैलोनिका में होना मालूम हो गया। यह भी क्या कम था कि जिस जगह गुप्तचरों का जाल सा बिछा हुआ था वहाँ लगभग आठ महीने निकाल दिए।

कुस्तुनतुनिया से सैलोनिका के पुलिस अधिकारियों के नाम हुक्म आया कि मुस्तफा फौरन गिरफ्तार कर लिया जाय। परन्तु पुलिस के सभी उच्च कर्मचारी किसी-न-किसी रूप में 'वतन' नामक संस्था से अपना सम्बन्ध रखते थे। पुलिस कमाण्डेण्ट ने अपने विश्वस्त व्यक्ति द्वारा मुस्तफा के पास खबर भेज दी कि "आपकी गिरफ्तारी के लिए सुलतान की सरकार ने कुस्तुनतुनिया से हुक्म भेजा है। मैं गिरफ्तारी के वारण्टों को अधिक-से-अधिक दो दिन तक रोक सकता हूँ, इसलिए इसी अर्से में आप यहाँ से किसी भी तरह भाग जाइए।" पुलिस की गुप्त सूचना पाते ही मुस्तफा सही-सलामत सैलोनिका से निकल गए। यहाँ से ग्रीस पहुँचे और ग्रीस से जहाज द्वारा जाफा के लिए रवाना हो गए। जाफा पहुँचने पर उन्हें मालूम हुआ कि उनकी गिरफ्तारी का वारण्ट उनके पहुँचने के पहले ही यहाँ भी पहुँच चुका है। इस बार खुफिया पुलिस ने निश्चय कर लिया था कि इस शख्स को जरूर ही गिरफ्तार कर लिया जाय। बेचारी ने बहुत दौड़-धूप की, काफी मोर्चेबन्दी भी की, परन्तु कमाल क्यों हाथ आने लगे थे? यहाँ पर गिर-फ्तारी करने वाला वही अहमद बे था, जिसने उन्हे सैलोनिका पहुँचने में पूरी-पूरी सहायता की थी। वह जहाज पर ही मुस्तफा कमाल से मिला। इतना ही नहीं वह अपने साथ ही उनकी फौजी वर्दी और कागज-पत्र भी लेता आया था। उन्हें चुपचाप जहाज से उतार कर जाफा के बाहर-बाहर दक्षिण की तरफ रवाना कर दिया। इतना कर चुकने के बाद अहमद बे ने सुल-तान की सरकार को कुस्तुनतुनिया लिख भेजा कि "मुस्तफा तो

कहीं सीरिया छोड़कर आज तक गया ही नहीं ! फिर यह गिरफ्तारी का वारण्ट कैसा ? वह मुद्दत से जाफा में है। मालूम होता है दफ्तर से भूल हुई है। अब आप जैसा हुक्म देंगे, किया जायगा।"

जब जाफा से अहमद बे ने ऐसा लिखा तब तो कुस्तुनतुनियाँ की पुलिस के आश्चर्य की सीमा नहीं रही। उसने मुफीद लुत्फी से पूछताछ की। लुत्फी ने भी लिख दिया कि "मुस्तफा साहब तो बहुत दिनों से यहीं पर हैं—वे कहीं बाहर नहीं रहे। मेरे साथ युद्धों से और आक्रमणों में बराबर रहे हैं।" पुलीस सच्ची होते हुए भी इस प्रकार झूँठी सिद्ध कर दी गई। अहमद बे और मुफीद लुत्फी, दोनों ने मिलकर मुस्तफा को बाल-बाल बचा लिया और सुलतान को उल्लू बना दिया।

जहाज से उतर कर मुस्तफा कमाल अपनी फौजी वर्दी पहने एक आक्रमण में जाकर शामिल हो गए और युद्ध करने लगे। यदि जैमिल, अहमद और मुफीद वगैरः मुस्तफा की इस संकटावस्था में सहायता न करते तो वे सुलतान की किसी जेल में ही सड़-सड़ कर मर जाते। उन्हें टर्की का त्राता बनने का सौभाग्य प्राप्त न होता। टर्की इस उन्नतावस्था में न होती, बल्कि वह भारत से भी बुरी दशा में दिखाई पड़ती; किन्तु जिस देश के निवासियों में अपने राष्ट्र का अभिमान हो और जिन्हें मुस्तफा कमाल जैसे सुचतुर योग्य नेता मिल जावें वह दूसरों के पंजो में कब आ सकता है ?

टर्की की तत्कालीन स्थिति

मुस्तफा कमाल के जीवन को भली प्रकार समझने के लिए तत्कालीन टर्की की दशा को समझ लेना अत्यन्त आवश्यक है। भूगोल जाननेवालों को यह तो मालूम ही है कि तुर्किस्तान एक ऐसी जगह है, जिसके चारों ओर ईसाई राज्य स्थापित हैं। तुर्किस्तान यूरोप और एशिया दोनों में बँटा हुआ है। रूस, जर्मनी, फ्रांस, आस्ट्रिया, इंग्लैण्ड प्रभृति बलवान गैरमुस्लिम राष्ट्र इसे चारों ओर से घेरे हुए हैं। अपने जन्मजात स्वभाव के अनुसार ईसाई राष्ट्र गैरईसाई राष्ट्र को हड़प जाने के लिए या आपस में बँटवारा कर लेने के लिए सदैव कटिबद्ध रहते ही हैं। टर्की साम्राज्य बहुत पुराना है। इस्लाम धर्म के प्रवर्तक हजरत मोहम्मद साहब

ने मुस्लिम साम्राज्य को अपनी तपश्चर्या और दूरदर्शिता से और भी दृढ़ बना दिया। उन्होंने अपने अनुयायियों को धर्म और राजनीति के एक सुदृढ़ सूत्र में बाँधकर उन्हें किसी योग्य बना दिया। प्राचीन काल में यह परिपाटी थी कि जो व्यक्ति धर्मगुरु होता था वही शासक भी माना जाता था। स्वयं हजरत मोहम्मद साहब ने मदीने में धार्मिक और राजनीतिक शासन का भार अपने ऊपर ले लिया था। उनके बाद से उनके स्थान पर काम करने वाले खलीफा कहलाने लगे। हजरत के बाद जो चार खलीफा हुए वे बड़े ही त्यागी और परोपकार वृत्ति के मनुष्य थे। इनके समय तक खलीफा योग्य व्यक्ति ही बनाया जाता था, परन्तु आगे चल कर खलीफा का पद वंशपरम्परा के अनुसार मिलने लगा। इसका जो परिणाम होना था वही हुआ। अयोग्य और स्वार्थी खलीफाओं के हाथ धार्मिक और राजनीतिक शासन सूत्र आ जाने से बड़ी गड़बड़ी उत्पन्न हो गई। इससे खलीफाओं के हाथ से शासनाधिकार केवल नाम मात्र को रह गया था।

अरब, ईरान, फारस, सीरिया, आर्मेनिया, अफगानिस्तान आदि मुस्लिम राष्ट्रों की शक्ति शनैः शनैः क्षीण होती गई, किन्तु टर्की का बल दिनों दिन बढ़ता ही चला गया। सोलहवीं शताब्दी के आरम्भ में टर्की ने मिश्र पर भी कब्जा कर लिया। मिश्र पर अधिकार हो जाने से टर्की के सुलतान सलीम प्रथम ने खलीफा का पद ग्रहण किया। ये उसमानिया खानदान के प्रथम खलीफा थे। इसने इस्लाम-साम्राज्य की खूब वृद्धि की। अनेक ईसाई राष्ट्रों को मिटाकर अपने बाहुबल से मुस्लिम साम्राज्य की सीमा विस्तृत की। सलीम के खलीफा होने के बाद से आज तक टर्की

के प्रत्येक सुलतान को शासन-सूत्र हाथ में लेते समय उलमा की सम्मति और शैखुल इस्लाम से हजरत अली साहब की पवित्र तलवार ग्रहण करनी पड़ती है और साथ ही पैगम्बर मोहम्मद साहब का अंगा हजरत अली की विजयपताका आदि वस्तुएँ भी ग्रहण करनी पड़ती हैं। ये सब वस्तुएँ पहले बगदाद में थीं, वहाँ से मिश्र में पहुँची और मिश्र से कुस्तुनतुनिया टर्की की राजधानी में लाई गई। टर्की इन दिनों एक समृद्ध साम्राज्य था। फ़ारस के सिया सम्प्रदाय के मुसलमानों के अतिरिक्त भारत, जावा, चीन, सुमात्रा, अफ्रीका, मलाया आदि सभी देशों के मुसलमानों ने टर्की की सत्ता स्वीकार कर ली थी। सन् १५३३ ई० में भारत के मुगल बादशाह हुमायूँ के आक्रमण से बचने के लिए गुजरात के मुसलमान राजा बहादुरशाह ने तुर्की के सुतलान से सहायता माँगी। सुलतान ने तत्काल ८० लड़ाई के जहाजों में, उसकी रक्षार्थ अपनी सेना भर कर भेजी। सारांश यह कि टर्की उस समय का इतना प्रबल राज्य था कि वह सर्वदा अपने सहधर्मी शासकों को पृथ्वी के किसी भी भाग पर सहायता पहुँचाने को प्रस्तुत रहता था।

हजरत मोहम्मद साहब द्वारा जो यवन-साम्राज्य की नींव डाली गई, पहले उसकी राजधानी मदीने में रही, फिर दमस्क में, इसके बाद बगदाद में, यहाँ के बाद कैरो मे और अन्त में कुस्तुनतुनिया में रही। इस खिलाफत को टर्की में आए अभी चार-सौ से कुछ ही ज्यादा वर्ष हुए हैं।

टर्की को फलता-फूलता और समुन्नत देखकर दूसरे गैर-ईसाई राष्ट्र उससे डाह करने लगे। धीरे-धीरे यूरोप के प्रत्येक

राष्ट्रों में व्यापारिक प्रतिद्वन्द्विता उत्पन्न हुई। परस्पर विरोध और वैमनस्य की वृद्धि होने लगी। पश्चिम और मध्य यूरोपवालों का तथा रूस का मध्य एशिया के साथ व्यापार करने का जल-मार्ग ब्लैक सी (कृष्णसमुद्र) है। डेन्यूब नदी भी इसीमें मिलती है। यह पूर्व और पूर्व-दक्षिण यूरोप के व्यापार का एक मात्र जल-मार्ग कहा जा सकता है। इस समुद्र का उत्तरीय तट रूस से घिरा हुआ है। रूस के लिए तो संसार से माल मँगाने का एक मात्र यही मार्ग है। इस समुद्र को भूमध्यसागर से मिला देने वाली दो जल-प्रणालियाँ हैं जो तुर्किस्तान के बीच से गई हैं। इन दोनों प्रणालियों के दोनों तटों पर अच्छी पहाड़ियाँ हैं। इस भूमि पर राज्य करने वाला थोड़ी सी सेना रखकर भी ब्लैक सी के द्वारा होने वाला व्यापार चाहे जब बन्द कर सकता है। इन तटों के शासक बात-की-बात में यूरोप का सारा व्यापार चौपट कर सकते हैं। इन प्रसिद्ध जल-प्रणालियों का नाम बास्फोरस और दर्रेदानियाल है। बास्फोरस के किनारे कुस्तुनतुनिया और स्कुटारी हैं। इसी प्रकार दर्रेदानियाल भी बड़े महत्व की जल-प्रणाली है। इनपर बहुत समय से टर्की का आधिपत्य चला आ रहा है। इनके कारण ही समस्त यूरोप के राष्ट्र तुर्किस्तान पर बड़ी तीखी नजर रखते हैं। कितनी ही बार कई राष्ट्रों ने टर्की पर चढ़ाई करके उसे कुचल देने का प्रयत्न भी किया, किन्तु मनोकामना पूर्ण न कर सके। जब कभी किसी ने चढ़ाई की तब कोई-न-कोई टर्की की मदद पर खड़ा हो गया। इसके अतिरिक्त प्रकृति ने उस भूमि को जहाँ तुर्क साम्राज्य स्थापित है एक मजबूत दुर्ग बना दिया है। कोई भी दुश्मन, कब्जा करना तो दूर रहा चढ़ाई में भी सफल नहीं हो सकता।

सोलहवीं सदी के मध्य तक तुर्क साम्राज्य का नक्षत्र मध्य आकाश में चमकने लगा। समस्त यूरोप में उसकी तूती बज रही थी। विशाल टर्की अलवेनियाँ से फारिस तक और मिश्र से काकेशस तक फैला हुआ था। यूरोप के सम्राट् नजरें ले-लेकर टर्की-सुलतान की सेवा में पहुँचा करते थे। टर्की की समुद्री फौजें मेडीटरेनियन सी में स्वच्छन्द विचरण करती थीं। यूरोप के सभी राष्ट्र सहायता के लिए टर्की के आगे अपना हाथ फैलाए रहते थे। उत्तरी अफ्रीका उसके कब्जे में था। वियाना में भी जाकर उसने अपनी तलवार बजाई और गैर-मुस्लिम राष्ट्रों को अच्छी तरह धर दबोचा। इसके बाद धीरे-धीरे, तुर्किस्तान दुर्बल सुलतानों के हाथ में आ जाने के कारण पतन की ओर बढ़ने लगा। यह दशा देखकर पड़ोसी राष्ट्रों ने उसे खा जाना चाहा। वर्षों तक चलने वाले युद्धों में टर्की को लगा रहना पड़ा। रूस ने बारम्बार युद्ध करके टर्की की कमर तोड़ दी। आस्ट्रिया भी मौका पाते ही टर्की पर आक्रमण कर बैठता था। रात-दिन के युद्धों से टर्की बहुत निर्बल हो गया। वर्षों तक लगातार शत्रुओं से लोहा लेते-लेते साम्राज्य की अन्तरङ्ग स्थिति अत्यन्त बिगड़ गई। घरू झगड़े उठ खड़े हुए। दूसरे आक्रमकों की कूटनीति से अथवा अन्य दूसरे कारणों से टर्की में ही अनेक तुर्क बगावत के लिए तय्यार हो गए। यहाँ तक कि कई सुलतान बागियों के हाथो मारे गए। यूरोप के कई राष्ट्रों ने तुर्किस्तान के कई स्थानो को छीन लिया। विस्तृत तुर्क साम्राज्य अब धीरे-धीरे घटने लगा।

सन् १८८० में टर्की ने अपनी सेना को यूरोप के ढंग की शिक्षा देने का कार्य जर्मनी को सौंपा। कुछ ही वर्षों में एक

मुस्तफा और उनके साथी अधिकारी अपनी चालाकी में सफल हुए। मुस्तफा सैलोनिका आ गए। यहाँ वे अपनी माता और बहिन के साथ रहने लगे। यहाँ बहुत समय तक चुपचाप रहे, ताकि सुलतान और उसकी पुलिस को उन पर पूरा भरोसा हो जावे और वह बेफिक्र बन जावे। अब तो दूसरे लोग भी मुस्तफा पर सन्देह करने लगे कि कहीं यह सुलतान का धूर्त खुफिया तो नहीं है। क्योंकि कभी तो क्रान्ति में शामिल हो जाता है और कभी एकदम अलग हो जाता है; परन्तु यह तो भ्रम ही था। मुस्तफा तो अपना उद्देश्य पूर्ण किए बिना चुप बैठने वाले व्यक्ति नहीं थे। जब उन्हें अपने एक अत्यन्त विश्वस्त मित्र द्वारा यह मालूम हुआ कि यहाँ 'इत्तहाद और तरक्की' नामक एक गुप्त संस्था मौजूद है तो वे बड़े ही खुश हुए। उन्हें यह भी बताया गया कि यहूदियों के 'मैसोनिक लाजों' की ओट में यह संस्था चलाई जा रही है। क्योंकि इन लॉजों की सुलतान न तो तलाशी ले सकता है और न उनके मेम्बरों की गिरफ्तारियाँ ही कर सकता है। अतएव इन लाजों की ओट में, बेफिक्री से षड्यंत्रों की रचना हो सकती है। सुलतान ने जिन राजनीतिक क्रान्तिकारियों को निर्वासित कर दिया है, इस संस्था का उनसे भी सम्बन्ध स्थापित है। ये आशापूर्ण बातें सुनकर मुस्तफा को बड़ी ही प्रसन्नता हुई।

अब मुस्तफा चुपचाप 'इत्तहाद और तरक्की' नामक संस्था के सदस्य बन गये। सदस्य तो बन गए, परन्तु संस्था के संचालकों में और उनमें पटती नहीं थी। वे अपनी बात सब से मनवाना चाहते थे। वे निर्भय होकर सदस्यों की आलोचना करते और

खरी खोटी भी सुनाने मे नहीं चूकते थे। उनका मजाक उड़ाते और उनके मुँह पर ही उनकी निन्दा भी करते। इन कारणों से मुस्तफा अन्तरङ्ग समिति के चुनाव में नहीं आ सके; क्योंकि सभी सदस्य इनके इस व्यवहार से नाखुश रहते थे।

अभी तक मुस्तफा कमाल की माता जुबेदा और उनकी बहिन मकबूला को इस बात का पता नहीं था कि वे क्रांन्तिकारी हैं। परन्तु इस बार उन दोनों के कानों में भनक पड़ गई। जुबेदा एक किसान की बेटी थी, वह बहुत ही डरी। उसने अपने पुत्र मुस्तफा को बहुत समझाया बुझाया, परन्तु उन्होंने कभी आज तक माता का कहना माना होता तो आज भी मानते। दोनो में काफी वाद-विवाद हुआ और तू-तू मैं-मैं भी हुई। परन्तु कमाल साहब अपने विचारों पर अचल रहे। वे मेरु की भाँति अटल थे। उन्हें अपने सिद्धान्त से विचलित करने की शक्ति किसी में नहीं थी। मुस्तफा के निश्चय के आगे एक बार फिर माता को पुत्र से हार खानी पड़ी। इतना विरोध करती हुई भी वह अपने पुत्र की सहायता करती रहती थी। कमाल ने रोज की कहा सुनी से बचने के लिए अलग मकान किराए पर लेकर रहना शुरू कर दिया।

सन् १९०८ ई० में 'नवीन तुर्क' संस्था के सदस्यों ने क्रान्ति करने का पक्का इरादा कर लिया। प्रजा और सेना दोनों ही क्रान्ति के लिए आतुर थे। क्रान्ति का ज्वालामुखी अन्दर-ही-अन्दर खूब धधक रहा था। केवल स्फोट होने मात्र की देर थी। क्रान्तिकारी मौजूदा सरकार को अलग हटा कर अपनी नयी सरकार और नया मंत्रि-मण्डल शीघ्र-से-शीघ्र स्थापित करने की

तैयारी में थे। नियाजी नामक एक क्रान्तिकारी थोड़े से साथियों को लेकर पहाड़ों में चला गया और वहाँ पहुँच कर उसने विप्लव का झण्डा खड़ा कर दिया। अनवर ने भी आगा-पीछा सोचे बिना ही विप्लव की घोषणा कर दी, किन्तु मुस्तफा कमाल विप्लव के लिए अभी उपयुक्त समय नहीं समझते थे। वे इन लोगों की इस बेवकूफी को अच्छी तरह समझ, देख रहे थे। भारतीय क्रान्ति में जिस प्रकार मङ्गल पाण्डे ने समय से पहले ही क्रान्ति के शान्त महासागर में पत्थर फेंक कर हिलोरें उत्पन्न करदी थीं, उसी तरह नियाजी और अनवर दोनों ही टर्की में समय से पहले ही क्रान्ति करने में उतावली कर गए।

मुस्तफा कमाल इस तमाशे को देख रहे थे। वे उतावले नहीं थे। किसी भी काम को करने के पूर्व देश और काल के कांटे पर उसे तोल लेना अपना कर्त्तव्य समझते थे वे बिना अच्छी तैयारी के आगे नहीं आना चाहते थे। वे अपना ऐसा काम चाहते थे जिसमें नाकामयाबी को जरा भी गुञ्जायश न मिले। वे भेड़ की तरह आँखें मीच कर चल देना मूर्खता समझते थे। बिना अनुकूल परिस्थिति के वे विप्लव को व्यर्थ समझते थे। यदि परिस्थिति प्रतिकूल हो तो अच्छे-से-अच्छे प्रयत्न असफल हो जाते हैं। ऐसे मौके पर बुद्धि, दूरदर्शिता, साहस, धैर्य, शौर्य, त्याग कुछ भी काम नहीं आते। परन्तु जब समय अनुकूल आ जाता है तब क्रान्ति आप-ही-आप हो जाती है। षड्यन्त्र सफल हो जाते हैं।

टर्की की यह क्रान्ति उसी तरह सफल हुई, जिस तरह सन् १८५७ का भारतीय विप्लव। टर्की के कुछ विप्लवकारी पहाड़ों में

पहुँच गए। सुलतान ने जो फौजें उन्हें दबाने के लिए भेजी, वे उन्हें दमन करने के बजाय उन्हीं में मिल गई। इसका मूल कारण यह था कि वर्षों से फौजी सैनिकों को वेतन नहीं मिला था और न कोई उनकी बातें ही सुनता था। सुलतान ने जिन-जिन फौजों को बागियों से लड़ने का हुक्म दिया, उन सभी ने इन्कार कर दिया। यह देख कर सरकार की चौकड़ी भूल गई। भारत के विप्लव में यह बात नहीं थी। भारतीय सेनाएँ अपने अफसरों के इशारों पर अपने भाइयों को पीस डालने पर उतारू थीं। इसी ऐक्य के अभाव से भारतीय-विप्लव असफल रहा। यहाँ योग्य नेताओं का अभाव नहीं था। तात्या टोपी, नाना साहब और महारानी लक्ष्मीबाई जैसी शक्तियाँ यहाँ पर आगे बढ़ीं, परन्तु संगठन और राष्ट्रीय-भावना के अभाव में असफलता पल्ले बँधी। वैसे विप्लव का फल हुआ अवश्य—ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन का अन्त कर दिया गया, परन्तु जो सोचा था वह नहीं हुआ। टर्की के सैनिकों का संगठन देख कर सभी लोग दंग थे। 'इत्तहाद और तरक्की' नामक संस्था के सदस्य यह देखकर विस्मित हो गए कि सुलतान की हुकूमत काफूर हो गई। कोई भी उसकी आज्ञा मानने को तैयार नहीं था। जब सेना ने ही इन्कार कर दिया, तब प्रजा से क्या आशा की जाती?

टर्की के सुलतान ने बड़ी होशियारी से, इस मौके को सँभाला। उसने तत्काल एक ऐलान प्रकाशित किया, जिसमें कहा गया कि "टर्की में अब शीघ्र ही प्रजा सत्तात्मक वैध-शासन स्थापित किया जायगा। आज तक जो कुछ भी मेरे साम्राज्य में असन्तोष रहा, इसका उत्तरदायित्व मेरे सलाहकारों पर है।" सुलतान ने

खुफिया पुलिस का विभाग तोड़ दिया। क्रान्तिकारियों के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित की। नियाजी और अनवर दोनों ही विजयी हुए। लोगों ने उनका धूमधाम से स्वागत किया, जुलूस निकाले, बधाइयाँ दीं और उन पर फूल बरसाए। यह सब कुछ हुआ, परन्तु इसका परिणाम टर्की के लिए घातक हुआ। २४ जुलाई १९०८ को नई सरकार स्थापित कर दी गई। परन्तु यह शासन कुछ ही महीनों चला। ता० २४ अप्रैल सन् १९०९ को मैसीडोनिया की सेना ने कुस्तुनतुनिया पर आक्रमण कर दिया। ता० २६ को नवीन मंत्रिमण्डल ने शासन-कार्य से त्यागपत्र दे दिया। ता० २७ को राष्ट्रीय-सभा की एक बैठक हुई, जिसमें यह निश्चय किया कि सुलतान अब्दुल हमीद को उसके पद से हटाकर उसकी जगह उसके छोटे भाई मोहम्मद पंजुम को नियुक्त किया जाय। कुस्तुनतुनिया में एक वर्ष के लिए फौजी कानून (मार्शल ला) जारी किया जाय। इस उथल-पुथल से टर्की साम्राज्य में बड़ी खलबली उत्पन्न हो गई। राष्ट्र की नाव डगमगा उठी।

सन् १९११ तो टर्की के लिये बहुत ही बुरा सिद्ध हुआ। इस वर्ष कुस्तुनतुनिया में फिर से फौजी कानून जारी कर दिया गया। सितम्बर महीने के आखीर में टर्की और इटली में लड़ाई छिड़ गई। इटली ने कुछ ही दिन के युद्ध से ट्रिपली नगर पर कब्जा कर लिया और टर्की के कई बन्दरगाह भी छीन लिए। नवीन सल्तनत स्थापित होने पर इस प्रतिक्रिया का लाभ सुलतान ने खूब उठाया। उसने जनता को क्रान्तिकारियों के विरुद्ध भड़काया, लोगों को मजहबी जोश दे-देकर खूब ही भड़काया और फौजों

को भी उसकाया। सुलतान के बहकाने में आकर फौजें बिगड़ उठीं। उसने क्रान्तिकारी अफसरों को मरवा डाला, कुस्तुनतुनिया पर कब्जा करके 'इत्तहाद और तरक्की' संस्था की जड़ खोद फेंकी और खिलाफत, सुलतान तथा इस्लाम की जयघोष के नारे लगवाए।

६
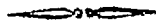
मुस्तफा मैदान में

अच्छा हुआ मुस्तफा साहब नियाजी और अनवर की इस क्रान्ति में सम्मिलित नहीं हुए, अन्यथा रंग ही कुछ दूसरा बन गया होता। जब यह प्रतिक्रिया हो रही थी तब मुस्तफा कमाल और अनवर वगैरः मेकडोनियाँ में थे। इस रक्त-शून्य राज्यक्रान्ति में अनवर पाशा युद्ध-मंत्री बनाये गये थे। एक प्रकार से शासन-सूत्र अनवर के ही हाथ में था। मुस्तफा कमाल की इनसे नहीं बनती थी। अनवर की तूती बज रही थी। यह कमाल के लिए असह्य बात थी। इतना सब कुछ होते हुए भी इस सन् १९०८ की क्रांति में आपने अच्छा काम किया। इन्होंने अपनी फौजों की सहायता से क्रान्ति के पश्चात् होने

वाली प्रतिक्रिया को अच्छी तरह दबा दिया। इन बातों मे मुस्तफा पारंगत थे। जब इटली ने टर्की पर आक्रमण किया था तब ट्रिपोली की रक्षा के लिए आप भेजे गए थे। जब इन्होंने देखा कि इटली की सेना के सामने टर्की की फौज कम है तो शीघ्र ही वहाँ अरबों को कवायद परेड का काम और शस्त्रास्त्र संचालन सिखा कर तय्यार कर दिया। ज्योंही वे सैनिक कार्य में प्रवीण हुए, इटली वहाँ से अपना बोरिया बँधना समेट कर चलता बना। जहाँ मुस्तफा गए और उन्होंने जो काम हाथ में लिया, उसीमें वे सफल हुए। ऐसा मालूम होता था मानो विजयश्री आप पर अनुरक्त हो गई हो।

सन् १९१० में मुस्तफा टर्की के युद्ध-मंत्री की आज्ञा से फ्रांस गए। वहाँ फतहीबे टर्की के राजदूत बन कर रहते थे। वे इनके मित्र थे। मुस्तफा वहाँ सैनिक सलाहकार बनाकर भेजे गए थे। वहाँ आपने जिस योग्यता से अपने पद को निबाहा, वह लासानी था। इनकी योग्यता, तर्क, दूरदर्शिता, दृढ़ता और वीरता देख कर दुश्मन भी प्रशंसा करते थे।

नियाजी और अनवरपाशा द्वारा रक्त-शून्य क्रांति से मुस्तफा को टर्की की दशा का ज्ञान अवश्य हो गया, किन्तु वे ऐसी नासमझी और उतावली को देखकर संतुष्ट नहीं थे। वे जानते थे कि यह क्रांति व्यर्थ है, इसलिए वे अपने काम में ही लगे रहे। उन्होंने उधर दिलचस्पी नहीं ली। आजकल आपका नाम 'मुस्तफा कमालबे' था। वे इन दिनों जनरल स्टाफ के सीनियर अफसर हो गए थे। अब उनकी बहुत इज्जत होने लगी। वे टर्की के बड़े अफसर बन गए थे। इस पद पर पहुँचने

से उनका घुन्नापन कम हो गया। अब वे लोगों से मिलते-जुलते और खुलकर बातचीत भी करते थे। धीरे-धीरे वे उन्नति की ओर अग्रसर होते गए। अब वे टर्की के प्रभावशाली व्यक्ति हो चुके थे, लोग भी उन्हें अपना शुभचिंतक सच्चा नेता मानने लगे थे।

मेकडोनिया से बदल कर वे सैलोनिका आ गए। उनका प्रभाव लोगों पर काफी था। उन्होंने फिर गुप्त संस्था का संगठन किया। उनका उद्देश्य यह था कि टर्की तुर्कों के हाथ में ही होनी चाहिए। विदेशियों को यहाँ से निकाल बाहर कर देना चाहिए और प्रजासत्तात्मक सरकार स्थापित करनी चाहिए। कमाल के गुप्त संगठन की सूचना टर्की सरकार को मिली। उसने उन्हें कुस्तुनतुनियाँ बुला लिया। यह स्थान गुप्त संगठन और राज्यक्रान्ति के लिए उपयुक्त नहीं था। उन्हें बड़ी तकलीफों का सामना करना पड़ा। वह राजनीति और राजनीतिज्ञों को घृणा की दृष्टि से देखता था। राजनीतिज्ञ भी मुस्तफा कमाल की नीति से घृणा करते थे, परन्तु गुप्तरूप से। कमाल इस व्यवहार से सख्त नाराज था। वह चाहता था कि जो कुछ भी किया जाय, वह खुल्लमखुल्ला किया जाय। गुप्तरूप से लुकछिप कर किसी व्यक्ति विशेष के विरुद्ध प्रचार करना कमीनापन है। वे स्वयं मुँहफट थे। जिसके विरुद्ध कुछ कहना होता उसीके मुँह पर झाड़ते थे, फिर भले ही कोई नाराज हो या खुश ! वे अपने साथ भी ऐसा ही चाहते थे। कभी प्रेम और कभी विरोध अपने लिए वे अपमानजनक समझते थे।

१०
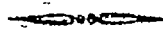
सन् १९१४ ई० में यूरोप के प्रसिद्ध युद्ध का श्रीगणेश हुआ। यह युद्ध जर्मनी और मित्र-राष्ट्रों में था। यदाकदा जर्मनी ने टर्की को सहायता दी थी। अब जर्मनी पर जब आपत्ति आई तो उसने टर्की सरकार से सहायता चाही। मुस्तफा कमालबे जर्मनी की इस माँग के विरुद्ध थे। वे यह जानते थे कि जर्मनी ने समय समय पर टर्की को मदद पहुँचाई है, किन्तु अपने देश की वर्त्तमान परिस्थिति को देखते हुए आपने जर्मनी के साथ होना अपने देश के लिए घातक समझा। उनकी इच्छा थी कि इस युद्ध में टर्की तटस्थ रहे। अनवरपाशा इस समय टर्की के युद्ध-सचिव थे। उसके और मुस्तफा कमाल के विचारों में

में सदा विषमता रहती थी। अनवरपाशा जर्मनी का पक्ष लेकर युद्ध में जूझना चाहते थे और कमाल उसे मना करते थे। दोनों में गर्मागरम बहस भी हुई। कमाल ने बहुत विरोध किया, किन्तु अनवर टर्की-सेना लेकर युद्ध में उतर ही गया। मुस्तफा कमाल को अनवर की यह अदूरदर्शिता और जिद बहुत ही अखरी। उन्होंने देखा कि अनवर टर्की को मिट्टी मे मिला देना चाहता है। उन्होंने अपने पद से स्तीफा दे दिया। इस समय वे सोफिया में फतहीबे के साथ सामरिक सलाहकार का काम कर रहे थे। स्तीफा देकर सोफिया से कुस्तुनतुनियाँ आ गए।

जब मुस्तफा कुस्तुनतुनियाँ आ[illegible]ए तब टर्की के युद्धमंत्री अनवरपाशा ने उन्हे स[illegible] दर्रेदानियाल के युद्धक्षेत्र में भेज दिया। अनवर ज[illegible] सिवा मुस्तफा कमाल के दूसरा कोई व्यक्ति दर्रेदा[illegible] कठिन मौके पर काम नहीं कर सकता। आप दर्रेदा[illegible] युद्धक्षेत्र में गए, किन्तु वहाँ भी वही झगड़ा। वहाँ पर जो जर्मन जनरल रहते थे उनमें और कमाल में सदैव मतभेद रहा करता था। अनवर की और जर्मन जनरलों की एक राय रहती थी, परन्तु मुस्तफा तो अपने मस्तिष्क के धनी थे। जब तक उन्हे कोई अच्छी तरह न समझा दे, तब तक वे किसी की बातों से सहज ही आ जाने वाले नहीं थे। वे लोगों की चालाकियों और धूर्त्तता पहले ही से भाँप जाया करते थे। जर्मन जनरलों की स्वार्थ-नीति को वे खूब ताड़ गए थे। जर्मन चाहते थे कि मित्रराष्ट्रों की फौजों को बेरोक टोक आगे बढ़ने दिया जाय और जब वे बीच में पहुँच जावें तब घेर कर बुरी तरह उन्हे नष्ट कर दिया जाय। परन्तु कमाल कहते थे

कि—"उन्हें आगे बढ़ने ही क्यों दिया जाय ? घुमते ही ऐसी करारी चपत क्यों न जमा दी जावे कि वे फिर इधर मुँह भी न करें ? इस द्रविड़ प्राणायाम की क्या आवश्यकता है कि उन्हें पहले घुसने दिया जाय और फिर आक्रमण किया जाय ?" इस विषय को लेकर खूब बहस हुई। अनवर और जर्मन अधिकारी उनसे अपनी बात मनवाना चाहते थे और मुस्तफा महाशय मानने को हरगिज तैयार नहीं थे। अनवर और जर्मन सेना-नायक मुस्तफा कमाल पर नाराज हो गए। यह सब होते हुए भी उनकी सेना ने उनकी ही आज्ञा मानी—जो मुस्तफा कहते उसी को फौज मानती—दूसरे की नहीं सुनती थी।

यहाँ अनारकोटा नामक स्थान में अँग्रेजी फौज से कमाल की जबर्दस्त टक्कर हुई। भयानक युद्ध ठना। मुस्तफा ने अँग्रेजी फौज को बड़ी करारी हार दी। यह देखकर अब अनवरपाशा और जर्मन जनरलों की आँखें खुल गईं। उन्हें यह देखकर बहुत ही आश्चर्य हुआ कि टर्की सैनिक युद्ध में बहुत ही कम काम आए और मुस्तफा को विजय मिली। बात यह थी कि मुस्तफा एक चतुर सेनानी है उन्होंने अपने सैनिकों को बिना सोचे विचारे युद्धाग्नि में नहीं झोंका। वे प्रत्येक मोर्चे पर पहुँच कर देख भाल करते थे। सैनिकों को अपने पुत्र की भांति रखते थे। उनकी सेना के सभी सैनिक उनसे बड़े ही सन्तुष्ट रहते थे। सैनिक उनकी बहुत तारीफ करते थे। धीरे-धीरे यह बात सर्वत्र फैल गई। मुस्तफा की इस अपूर्व विजय से उनका रणकौशल अब अच्छी तरह लोगों पर प्रकट हो गया। तुर्किस्तान के सभी अखबारों ने मुस्तफा के चित्र दे-देकर बड़े बड़े हेडिंग्स के नीचे इस विजय के

समाचार छापे। अँग्रेजी अखबारों ने मुस्तफा कमाल को 'डिफेण्डर आफ दी डार्डेनलीज' कहा—जिसका अर्थ है 'दर्रेदानियाल का रक्षक'।

इस युद्ध में मुस्तफा कमाल के सेनापतित्व में लगभग एक लाख साठ हजार सैनिक थे। इसीसे अनुमान लगाया जा सकता है कि इतनी बड़ी सेना को अपने अधीन बनाए रखना मामूली बात नहीं है। अधीन भी कैसी? मुस्तफा की आज्ञा से सर मिटने वाली, उनकी आज्ञा को सच्चे हृदय से मानने वाली और उन्हें दिल से चाहने वाली। इस जबर्दस्त सेनापति ने जिधर मुँह उठाया उधर ही दुश्मनों का खातमा कर दिया।

मुस्तफा की इस विजय पर अनवर और जर्मन सेनाध्यक्षों को कुढ़न पैदा हो गई। जहाँ देखो तहाँ मुस्तफा की जीत। यह देखकर अनवरपाशा ने उन्हें टर्की के उत्तरीय प्रदेश में रूसियों से लड़ने को भेजा। मुस्तफा काकेशियन सीमा पर पहुँचे। वहाँ पहुँच कर उन्होंने फौजों का बड़ा ही उत्तम संगठन किया। रूसी सैनिकों का बड़ी ही वीरता से मुकाबिला किया। कमाल की जीत हुई। रूसी फौजों को बहुत दूर तक खदेड़ कर तुर्किस्तान की सीमा-वृद्धि की। मुस्तफा की यहाँ भी विजय देखकर बड़े बड़े सेनानायकों के हृदय मे डाह पैदा हो गई।

× × × ×

इस यूरोपीय महायुद्ध में जर्मनी के मुख्य सेनापति मि० फालकेन हेन तुर्कों की सहायतार्थ टर्की आये हुए थे। यह बात मुस्तफा कमाल नहीं देख सके। वे अपने राष्ट्र में दूसरों के द्वारा अपनी रक्षा देखना पसन्द नहीं करते थे। उनकी सदैव यही

इच्छा थी कि टर्की में टर्की ही सब कुछ हों। परन्तु टर्की सरकार और अनवरपाशा के आगे इनकी चलती नहीं थी। यद्यपि मुस्तफा कमाल की बातों को और दलीलों को पचीसों बार सोलहों आने सत्य उतरती हुई देख चुके थे, फिर भी वे अपनी ही बात पर तने रहते थे। फालकेन हेन को शाम में टर्की की रक्षा के निमित्त सेनापति बनाया गया। इसकी युद्धनीति मुस्तफा कमाल को कत्तई पसन्द नहीं थी। यह जर्मन-सेनापति जिस नीति को अवलम्बन किए हुए अपना काम करता था, वह टर्की के लिए हानिकारक थी। फालकेन हेन ने अँग्रेजों से बगदाद वापस लेने का विचार प्रकट किया। अनवरपाशा ने भी उसकी हाँ में हाँ मिला दी, परन्तु मुस्तफा ने कड़े शब्दों में उन दोनों की इस स्कीम का विरोध किया। परिणाम कुछ नहीं हुआ। मुस्तफा को बहुत ही दुःख हुआ। यहाँ तक कि उन्होने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया। अनवरपाशा अपने को टर्की का धाता-विधाता समझता था, उसने उनके त्यागपत्र पर ध्यान न देकर उन्हे अलप्पो जाने का हुक्म दे दिया। यह एक प्रकार का निर्वासन ही समझिए। कमाल अलप्पो पहुँच गए।

अलप्पो से उन्होंने २० सितम्बर सन् १९१७ ई० को एक पत्र टर्की के ग्राण्ड वजीर तलातपाशा और युद्ध-मंत्री अनवर-पाशा के नाम भेजा, जिसमें उन्होने लिखा था—

"मैं आप लोगों को अपने विचार प्रकट कर देना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ, इसलिए जो मैं वर्त्तमान में देख रहा हूँ और इसका फल जो भविष्य में अवश्यम्भावी है, उससे मैं आपको समय रहते सूचित कर देने में ही टर्की का हित समझता हूँ।

इस महायुद्ध में यद्यपि टर्की ने भाग तो लिया है, किन्तु इसकी अन्तरङ्ग दशा बिगड़ती ही चली जा रही है। सर्व साधारण के खयाल टर्की की सरकार के प्रति खराब होते जा रहे हैं। शान्ति-प्रिय लोग ऐसी सरकार से अपना सम्बन्ध-विच्छेद कर देने को तय्यार हैं। वे लोग जो टर्की निवासी नहीं हैं और दूसरे देशों से आकर यहाँ की प्रजा बन गए हैं—बहुत ही घबराए मालूम होते हैं। उनके बालक वृद्धों को भोजन तक नसीब नहीं हो रहा है। ऐसी परिस्थिति में भला कौन सरकार के विरुद्ध खड़ा होने से घबरावेगा? ऐसी सरकार का स्थापित होना अत्यन्त आवश्यक प्रतीत हो रहा है जो शान्तिप्रिय हो। आर्थिक दशा टर्की की इतनी दयनीय हो रही है कि कुछ कहा नहीं जा सकता। आए दिन के युद्धों में संलग्न रहने के कारण टर्की की दशा बहुत ही नाजुक हो गई है, तिस पर वर्त्तमान युद्ध में टर्की का सम्मिलित हो जाना प्रजाजनों को बहुत बुरा लग रहा है। देश में सर्वत्र अराजकता की हवा बहने लगी है। यदि मौके को नहीं सँभाला गया तो मेरा विश्वास है कि टर्की साम्राज्य सदा के लिए नष्ट हो जायगा।

"अँग्रेज लोग फिलस्तीन को किसी भी तरह हथिया लेना चाहते हैं। यदि उनकी इच्छा पूर्ण हो गई, तो टर्की एक तरह से मर जावेगा। क्योंकि मिश्र, स्वेज कैनल और रेड सी पर उनका अधिकार हो जावेगा। टर्की की सभी उर्वराभूमि और धार्मिक स्थान अँग्रेजों के कब्जे में हो जावेंगे और एक न एक दिन टर्की मुस्लिम संसार से पृथक दिखाई पड़ेगा। इसलिए समझदार और दूरदर्शी व्यक्तियों का फर्ज है कि वे समय रहते ही सावधान हो जावें"

मुस्तफा के उक्त पत्र से उनकी गहरी राजनीतिज्ञता का पता लगता है। उन्होंने परिस्थिति का कितना पूर्ण अध्ययन किया था यह स्पष्ट दिखाई पड़ जाता है। जिस युद्ध के परिणाम को तत्कालीन बड़े-से-बड़े सेनापति या राजनीति-विशारद समझने मे असमर्थ थे, उसीको मुस्तफा कमाल ने अपने देश के लिए कितने स्पष्ट शब्दों में भविष्यवाणी के रूप मे प्रकट कर दिया था। यह कुछ कम आश्चर्य की बात नहीं है। कमाल को ये सब बातें आँखो लगी दिखाई पड़ रही थीं। वे अपने देश की धीरे-धीरे क्षीण होने वाली शक्ति को अच्छी तरह देख और समझ रहे थे।

वे जर्मन सेनापति फालकन हेन के बहुत ही विरुद्ध थे। वे अपने देश में गैर तुर्क द्वारा प्रबन्ध नहीं चाहते थे। वे उसकी कूट-नीति की कलई भी टर्की अधिकारियों के आगे खोलते रहते थे। मुस्तफा कमाल विदेशियो द्वारा टर्की के धन-धान्य सम्पन्न प्रान्तों की और तीर्थस्थानों की रक्षा के घोर विरोधी थे। इसमें वे अपने देश का कल्याण नहीं देखते थे। आँखें उठा कर देखने में एक मात्र मुस्तफा कमाल ही ऐसे व्यक्ति टर्की भर में दिखाई पड़ते थे, जिनकी रग रग में स्वदेशाभिमान भरा था। उनके प्रत्येक साँस से देश की आजादी का राग निकल रहा था। वे तो केवल टर्की की आजादी और उसकी ही उन्नति चाहते थे। वे कहते थे कि टर्की टर्कों की है। इसे कोई दूसरा आँखें उठाकर देख तो ले। जब तक एक भी स्वदेशाभिमानी तुर्क जीवित रहेगा तब तक किसी की माँ ने दूध नहीं पिलाया जो टर्की को नजर उठाकर देख सके। अपने स्वतंत्र विचार और देश-प्रेम के कारण तुर्क लोग भी मुस्तफा की ओर आशा भरी आँखों से देखने लगे थे। वे इन्हे ही अपना नेता

मानने लगे और यह समझ लिया कि यदि टर्की का कोई उद्धार कर सकेगा तो वह मुस्तफा ही करेगा।

आप सोचते होंगे मुस्तफा अलप्पो में निर्वासित होकर अपना जीवन योंही व्यतीत कर रहे होंगे। नहीं, 'कर्मवीर' जहाँ कहीं पहुँचता है वह अपने पुरुषार्थ द्वारा अपने भाग्य का निर्माण कर लेता है। मुस्तफा ने यहाँ भी नवयुवक तुर्कों का संगठन किया और उन्हें सैनिक-शिक्षा देकर तय्यार कर लिया। एक दिन तुर्क नौजवानों को साथ लेकर जर्मनी मेगजीन पर धावा बोल दिया और बारूद गोलों पर अधिकार कर लिया। इससे स्पष्ट हो जाता है कि वे जर्मन हों या अँग्रेज, किसी को भी टर्की में सामरिक शक्ति बढ़ाने देना नहीं चाहते थे। उनका कहना था कि टर्की की रक्षा के लिए तुर्क ही लड़ेंगे। दूसरे इतने भले कदापि नहीं हो सकते कि निस्वार्थ किसी राष्ट्र के लिए रक्त बहावें। वे चाहते थे कि तुर्क अपनी स्वाधीनता स्वयं सुरक्षित रखें। किसी भी विदेशी पर तनिक भी भरोसा न करें।

अलप्पो मे रहकर मुस्तफा कमाल ने तुर्कों में अपने विचारों का खूब प्रचार किया। वे अपने कार्य का क्षेत्र तय्यार कर रहे थे। अब जर्मनी की सामरिक शक्ति शनैः शनैः निर्बल होती जा रही थी। अनवरपाशा तलातपाशा और जर्मनी के सेनापतियों की बातें कोई नही मानता था। अब इन लोगों को ऐसे समय मुस्तफा कमाल की सहायता अपेक्षित हुई। अनवरपाशा और जर्मन सेनापति ने कमाल के पास एक पत्र भेजा, जिसमें उनके स्वदेश-प्रेम और सामरिक योग्यता की प्रशंसा करते हुए उन्हे अलप्पो से कुस्तुनतुनियाँ लौट आने का आग्रह किया गया।

मुस्तफा कमाल जब कुस्तुनतुनियाँ आए तब उन्हें फिलस्तीन के युद्धक्षेत्र में जाकर परिस्थिति को सँभालने के लिए कहा गया। वे फिलस्तीन गए। वहाँ पर अँग्रेजों ने अपने पैर जमा रखे थे। थोड़ी सी सेना के बल पर उन्होंने अँग्रेजों को ऐसा छकाया कि उन्हें छठी का दूध याद आ गया। युद्ध में कमाल ने वह कमाल कर दिखाया कि बड़े बड़े रण-पंडित देखते ही रह गए। उनकी वीरता अद्वितीय है। युद्ध-भूमि में जहाँ गोलियों की वर्षा होती थी वे बिना किसी ओट के वहाँ खड़े रहते थे। आसपास के लोग उन्हीं गोलियों से धड़ाधड़ मरते, परन्तु इनको कोई गोली छू तक नहीं जाती थी। कैसे आश्चर्य की बात है। एक दिन वे एक ट्रेंच (खाई) के बाहर बैठे थे। अँग्रेजों की ओर से खाई पर गोलियों की भीषण वर्षा हो रही थी, उनके सैनिकों ने हाथ जोड़ कर प्रार्थना की कि "आप किसी ओट में हो जाइए।" मुस्तफा ने कहा "अगर मैं ओट मे हो जाऊँगा तो फिर आपलोग क्या करेंगे ? आपलोग निर्भय रहिए। मेरा कुछ भी नहीं बिगड़ सकता।" ऐसा कहकर सिगरेट पीते हुए वहीं खड़े रहे। वे लोगों से वहाँ इस प्रकार बातचीत कर रहे थे, मानों उन्हे कुछ पर्वाह ही नहीं है। अपने सेनापति की इस वीरता पर सैनिक लट्टू होगए और उनका साहस दूना बढ़ गया।

एक बार उनकी मोटरकार पर अँग्रेजो ने एक बम् फेंका, परन्तु मुस्तफा का कुछ भी नहीं बिगड़ा—बाल भी बाँका नहीं हुआ। कार के आगे पीछे की सड़क टूट गई। कार का पर्दा टूट गया और ड्राइवर मर गया। मुस्तफा बच गए। उनका अटल, पक्का और निश्चय दृढ़ विश्वास था कि जब तक मैं

अपनी इच्छानुसार अपने देश को स्वतंत्र नहीं कर लूँगा, तब तक मेरा कोई भी कुछ बिगाड़ नहीं सकता। इसी निश्चय विश्वास के बल पर वे सर्वत्र नि:शंक घूमते फिरते थे।

एक दिन की बात है, रात के तीन बजे मुस्तफा कमाल खाई से निकल कर अँग्रेजी सेना की ओर चले। उन्हें आता देख कर, अँग्रेजों ने गोली बरसाना शुरू कर दिया। वे उस गोली-वृष्टि में ऐसे चले गए जैसे वर्षा ऋतु की रिमझिम बूँदाबाँदी में कोई मनुष्य जाता हो। एक गोली उनके हाथ की कलाई पर लगी, जिससे घड़ी टूट गई और कोई शारीरिक हानि नहीं पहुँची। थोड़ी देर बाद आप-ही-आप शत्रुओं ने गोलियाँ दागना बन्द कर दिया।

एक समय अँग्रेजों ने टर्की पर बड़े जोर का आक्रमण किया। यदि वहाँ मुस्तफा न होते तो बुरी तरह हार होती। टर्की की १९ वीं रेजीमेण्ट शत्रु के आक्रमणों से बुरी तरह घबरा रही थी। रेजीमेण्ट के कमांडिंग ने टेलीफोन द्वारा मुस्तफा कमाल को सूचित किया कि "फौज के पैर उखड़ रहे हैं। अँग्रेजों की जबर्दस्त गोलाबारी से वे घबरा उठे हैं। हिम्मत टूट गई है—भागने की तैयारी मे हैं।" मुस्तफा ने बड़े धैर्य और शान्ति से उत्तर दिया "मै यहाँ का प्रबन्ध ठीक करके शीघ्र ही आप लोगो के पास पहुँचूँगा। आप लोग केवल २४ घण्टा और जैसे तैसे जमे रहिए।" मुस्तफा अनफार्टा से शीघ्र ही चौनुकबेअर पहुँचे और चुपचाप शत्रु-सेना की ओर बढ़ते चले गये। अँग्रेजों ने दो गोलियाँ उन पर दागीं, परन्तु दोनो ही व्यर्थ हुईं। उनके साथियों ने कई बार आपसे आग्रह किया कि इस तरह दुश्मनों को

सेना की तरफ जाना खतरनाक है, परन्तु उन्होंने एक की न सुनी और शत्रु-सेना के निकट पहुँच कर अच्छी तरह लड़ाई का मैदान देखभाल कर धीरे-धीरे टहलते हुए अपनी सेना में लौट आये।

अँग्रेजी रण-भूमि को देखकर आपने निश्चय कर लिया कि यदि अँग्रेज यहीं जमे रहे तो टर्की का खुदा ही हाफिज है। उन्होंने रात भर आक्रमण की बड़े जोर की तय्यारी की। सहायता के लिए और फौजो को बुला लिया। सैनिकों को खाइयों में पास पास कर दिया ताकि उनका धैर्य्य न टूटने पावे। उन्होंने अपने सिपाहियों को साहस और धैर्य्य बँधाते हुए कहा—"देखो, जल्दी करने की जरूरत नहीं है। घबराओ मत, जब आक्रमण का समय आवेगा मैं तुम्हारे आगे होऊँगा। पहले जब मैं अपना हाथ उठाऊँ तब तुम लोग अपनी संगीनें तान देना। तुम लोग निर्भयता पूर्वक मेरे पीछे-पीछे चले आना।" इतना कहकर रात के तीन बजे वे सेना सहित खाई से बाहर निकले। जब अँग्रेजों की गोलाबारी बंद हुई, तब वे अकेले खड़े-खड़े कुछ देर तक सोचते रहे, बाद में अपना हाथ उठाया और आगे-आगे चलने लगे। अपने योग्य और बहादुर सेनानायक के पीछे-पीछे तुर्कों ने कदम बढ़ाये। शत्रु सेना पर टूट पड़े। इस आक्रमण से अँग्रेजों के पैर उखड़ गये और बेचारे भाग छूटे। हजारों सैनिक तुर्कों की संगीनों द्वारा वहीं मारे गये। टर्कों की जीत हो गई। इसी प्रकार एक बार और भी जब तुर्कों के जीतने की आशा नहीं रह गई थी और वे मैदान छोड़ कर भागना ही चाहते थे, तब मुस्तफा ने अपनी बुद्धिमत्ता और शौर्य के द्वारा तुर्कों को जिताया था। इन दो जीतों के कारण ही मुस्तफा कमाल को—

"पाशा"

की उपाधि मिली और वे मुस्तफा कमालपाशा बन गये। एक बार युद्ध में जर्मन-सेनापति ने मुस्तफा कमाल को अपनी जिद से हटाने और उसकी बात स्वीकार कराने की गरज से सोने के सिक्कों से भर कर एक बाक्स रिश्वत की शक्ल से उनके पास भेजा। कमालपाशा ने वह सिक्कों का सन्दूक ले लिया और लाने वाले के साथ ही उसके पहुँचने की रसीद भी भेज दी। कुछ दिन बाद जब उन्हें अवकाश मिला, अपने आदमी के हाथ वह स्वर्ण मुद्राओं का सन्दूक जर्मन सेनापति के पास ज्यों-का-त्यों धन्यवादपूर्वक लौटा दिया और अपनी रसीद वापस मँगा ली।

फिलस्तीन से लौटते समय वे अपनी सेनाओं को साथ लिये बगदाद की ओर बढ़े। अब मुस्तफा कमालपाशा कई सैनिक विभागों के सर्वेसर्वा बना दिये गये थे। वे विजयश्री से भूषित सेना सहित बढ़ रहे थे कि मार्ग में उन्हें अपने एक विश्वस्त मित्र का पत्र मिला, जिसमें उसने लिखा था कि शीघ्र ही अब युद्ध बन्द होने वाला है। पत्र पढ़ते ही उन्होंने बगदाद जाकर शत्रुओं से लोहा लेना ठीक नहीं समझा और कुस्तुनतुनियाँ की ओर कूच किया। जिस दिन मित्रराष्ट्रों ने कुस्तुनतुनियाँ में अपनी सेना के साथ प्रवेश किया, ठीक उसी दिन कमालपाशा भी कुस्तुनतुनियाँ में पहुँच गये।

लगातार छः वर्षों तक जर्मनी और मित्रराष्ट्रों में युद्ध चला। इस युद्ध में दोनों ओर की शक्तियाँ निर्बल पड़ गई थीं। यदि अमेरिका ने मित्रराष्ट्रों को मदद न पहुँचाई होती तो बहुत सम्भव था कि युद्ध अभी और चलता, किन्तु अमेरिका की सहायता

पाकर मित्रराष्ट्रों ने जर्मनी को धर दबोचा। इसके साथ ही जर्मनी में गृह-कलह का जोर बढ़ता जा रहा था। यही दशा जर्मनी के साथी टर्की की थी। इसकी भी आन्तरिक-स्थिति बहुत ही डाँवाडोल थी। रहा बेचारा आस्ट्रिया, उसकी क्या दम थी जो कुछ करता धरता। उधर रूस में पंचायती (सोवियेट) सरकार की स्थापना हो गई। वहाँ का रंग ढंग ही कुछ-का-कुछ बन गया। वह मित्रराष्ट्रों से अलग हो गया था। इस समय सिवा युद्ध बन्द होने के और कोई उपाय ही नहीं था। ११ नवम्बर १९१८ ई० को इस महाभारत का अन्त हुआ। जर्मनी बुरी तरह ठोकर खाकर गिरा और उसके हिमायती राष्ट्र टर्की और आस्ट्रिया भी हार गये।

जिस बात को मुस्तफा कमालपाशा वर्षों पहले देख रहे थे, वह आज सबकी आँखों के आगे नग्न रूप में आ गया। इस नाशकारी परिणाम को देखकर ही मुस्तफा कमालपाशा ने इस युद्ध से टर्की को दूर रहने की सलाह दी थी। परन्तु तलातपाशा और अनवरपाशा नहीं माने और अन्त में टर्की को इस बुरी परिस्थिति में लाकर रख दिया। मित्रराष्ट्रों ने जर्मनी से अपनी क्षतिपूर्त्ति चाही। परन्तु वह हार खाने पर भी छेड़े गये काले नाग की तरह फुफकार रहा था। वह क्षति-पूर्त्ति के लिये तैयार नहीं था। आस्ट्रिया ने ले-देकर अपना पिण्ड छुड़ाया और नीचा मुहँ किये चुप हो गया। रहा टर्की, सो टर्की पर तो अनेक ललचा रहे थे। सभी के मुहँ में टर्की के लिये पानी आ रहा था। बहुत दिनों से यूरोप के ईसाई राष्ट्र अवसर की ताक में ही थे। वह अवसर अब उन्हें मिल गया था। वे मृत्युशय्या पर पड़े हुए वृद्ध टर्की

को मार कर खा जाने के लिये भेड़ियों की तरह एकत्र हो रहे थे। जो-जो प्रान्त मित्रराष्ट्रों के कब्जे में आ चुके थे उनके बँटवारे का प्रश्न उपस्थित हुआ। बृटिश सरकार ने टर्की में अच्छा मुहँ मारा। फ्रांस और इटली ने भी अपना काम बनाया।

कमालपाशा इस शतरंज की चाल को बड़ी अच्छी तरह देख रहे थे। कुस्तुनतुनियाँ में शत्रुओं के पैर रखते ही वे उनकी इच्छा को ताड़ गये। जिस व्यक्ति ने युद्धारम्भ के समय ही परिणाम को जान लिया था, उसके लिये मित्रराष्ट्रों की ये चालें समझना कौन सा दुरूह कार्य था? मुस्तफा को आँखों के आगे टर्की का सर्वनाश दिखाई दे रहा था। वे अपने देश की आजादी के लिये तड़प रहे थे। अपने देश को विदेशियों के हाथों में जाता देख कर उनका जी जल रहा था। वे टर्की के सुलतान के पास पहुँचे और उन्हे एकान्त में समझाया—"टर्की हमारे हाथों से अब गया ही समझिये। मुझे आप आज भी यदि युद्ध-मंत्री के अधिकार दे दें तो मैं कल ही टर्की को आजाद करके दिखा सकता हूँ। परन्तु वर्त्तमान पार्लियामेण्ट भंग करनी पड़ेगी, क्योंकि इसमे सभी सदस्य देशद्रोही, कायर और मुर्दादिल हैं।" सुलतान ने आपकी बात पर ध्यान नहीं दिया। सुलतान तो "विनाशकाले विपरीत बुद्धिः" को चरितार्थ कर रहा था।

११

मुस्तफा 'गाजी' हुए

टर्की के सुलतान और उसके मंत्रिमंडल की यह दुर्दशा देख कर मुस्तफा कमालपाशा ने अपने कार्य से कुछ दिनों के लिए छुट्टी ले ली। अंग्रेज मुस्तफा से बहुत ही घबराते थे। वे टर्की में अपना एक ही प्रबल दुश्मन देखते थे और वह था 'कमालपाशा।' बने बनाए खेल को गुड़गोबर कर देने वाला, 'दाल-भात में मूसलचन्द' इन्हे ही मानते थे। वे इनमे बड़े ही सतर्क रहते थे। अपने जासूसों को, उनके कामों पर निगाह रखने के लिए, उन्होंने उनके पीछे छोड़ रखा था। वे हमेशा यही देखा करते कि कमाल क्या करते हैं। क्या चाहते हैं, कहाँ जाते आते हैं और किन-किन से मिलते हैं? इत्यादि।

जासूसों की रिपोर्टों से अंग्रेज और भी घबरा गए। उन लोगों ने यह समझ कर कि—यदि कमालपाशा को कुस्तुनतुनियाँ से नहीं हटाया गया तो यह सब करे धरे पर पानी फेर देगा—सुलतान और उसके मंत्रिमंडल से इन्हें किसी बहाने कहीं दूसरी जगह भेज देने को कहा। टर्की सरकार ने भी बड़ी चालाकी से काम लिया। उसने मुस्तफा कमालपाशा को पूर्वीय सेनाओं का इन्स्पेक्टर बना कर भेज दिया।

मुस्तफा साहब १५ मई सन् १९१९ को सामसौन नामक स्थान में पहुँचे। जब वे वहाँ पहुँचे तो इन्हें मालूम हुआ कि यूनानियों ने स्मर्ना मे कल ही कदम रखा है। इनको बहुत ही बुरा मालूम हुआ। ये कदापि नहीं चाहते थे कि तुर्किस्तान में कोई दूसरे देश की सत्ता अपना पैर जमा सके। इन्होने यूनानियों को मार भगाने की ठान ली और इतनी पक्की ठान ली कि इस सम्बन्ध में ये किसी की भी कुछ बात सुनता नहीं चाहते थे। यह निश्चय कर लिया कि यदि टर्की सरकार भी मुझे अपने इरादे से च्युत करना चाहेगी तो मैं उसकी भी एक नहीं मानूँगा।

मुस्तफा कमालपाशा ने अनातूलिया पहुँच कर देखा कि वहाँ पर यूनानियों ने कब्जा कर लिया है और धीरे-धीरे आगे भी बढ़ रहे हैं। यह बात इनसे नहीं देखी गई। उधर मित्रराष्ट्र तुर्की सरकार से सन्धि पर हस्ताक्षर करा रहे थे। इधर यूनानी भी टर्की को जितना दबाया जा सके हड़प रहे थे। 'माले मुफ्त दिले बे रहम' की कहावत यहाँ बिलकुल चरितार्थ हो रही थी। ब्रिटिश साम्राज्य ने अपनी नीति के अनुसार, टर्की से की हुई प्रतिज्ञाएँ, बालाएताक कर दी थीं। इस महायुद्ध के समय, बृटिश ने भारत

को भी बहुत कुछ सुधार वगैर: कर देने का आशा-भरोसा दिया था, परन्तु 'रौलट एक्ट' और 'जनरल डायर का पंजाब हत्या-कांड' भारत को पुरस्कार में मिला था। टर्की को भी मित्रराष्ट्र और यूनान हड़प लेने की तय्यारी कर रहे थे। यूनान उन्हें बहला रहा था और वे यूनानियों को बहला रहे थे। मृतप्राय टर्की को ये गिद्ध चट कर जाना चाहते थे। टर्की सरकार तो मित्रराष्ट्रों के हाथ की कठपुतली बनी हुई थी, किन्तु मियाँ मुस्तफा इन चाल-बाजियों को अच्छी तरह भाँप रहे थे। इन्होंने अनातूलिया की सभी राष्ट्रीय संस्थाओं का संगठन करना शुरू किया और उसमें कृतकार्य हुए। अच्छा संगठन हो जाने पर कमाल ने यूनानियों को टर्की से कान पकड़ कर निकाल देने का पक्का इरादा कर लिया।

कुस्तुनतुनियाँ मित्रराष्ट्रों के अधिकार में था। वहाँ विदेशियों की तूती बोल रही थी। टर्की सरकार 'किंकर्त्तव्य विमूढ़' की भांति तमाशा देख रही थी। यहाँ कुछ स्वराजवादी तुर्क नेता थे, उन्हे मित्रराष्ट्रों ने तुर्क सरकार द्वारा वहाँ से निर्वासित करा दिया। कई राष्ट्रीय नेता खुद-ब-खुद भी कुस्तुनतुनियाँ से चले गये थे। मित्रराष्ट्रों ने और टर्की सरकार ने समझ लिया कि "अच्छा हुआ जो इन राजद्रोहियों का काला मुँह हो गया।" परन्तु इसका फल बड़ा ही भयंकर निकला। ये सब देशभक्त कुस्तुनतुनियाँ से चल कर अनातूलिया जा पहुँचे। संयोग इतना उत्तम होता गया कि मुस्तफा कमालपाशा की शक्ति बढ़ती ही गई।

अपनी बिखरी हुई शक्तियों को अच्छी तरह बटोर कर

मुस्तफा ने यूनानियों को घर दबाया। यूनानियों की बड़ी दुर्दशा हुई। अनातुलिया वाले मुस्तफा कमाल की बुद्धि और बल देख कर बहुत ही प्रसन्न हुए। उन लोगों ने समझ लिया कि टर्की की यदि किसी के द्वारा रक्षा हो सकती है तो वह एक मात्र मुस्तफा कमाल के द्वारा ही हो सकती है। टर्की-जनता भी अपने रक्षक की तलाश में थी। उन्होंने इस संकटमय अवस्था में एक मात्र मुस्तफा ही को अपना उद्धारक पाया। सब लोगों ने कमाल का साथ दिया। बड़ी लगन और आशा के साथ तुर्क लोग मुस्तफा कमाल के झण्डे के नीचे आकर एकत्र होने लगे। यह देखकर कमाल का उत्साह और जोश चौगुना बढ़ गया। जिस अवसर की टोह मे मुस्तफा साहब आज तक थे, वह अनायास ही आज उनके आगे स्वयं उपस्थित हो गया। उन्होंने अपने साथियों से कहा—

"विदेशी लोग चारों ओर से टर्की पर अपने दाँत गड़ाए बैठे हैं। टर्की सरकार भी हमारे खिलाफ है। मित्रराष्ट्रों ने उसे मोम की मक्खी बना लिया है। बहुत सम्भव है कि हमें आपस मे अर्थात् टर्की सरकार से ही युद्ध लेना पड़े। अब बड़े संकट का समय उपस्थित हुआ है, हमारी परीक्षा का अवसर है। हमें किसी को बिना अपना नेता बनाए अब काम नहीं करना चाहिए।"

यह सुनकर तुर्कों ने उन्हे ही अपना नेतृत्व करने की सलाह दी। परन्तु मुस्तफा जरा स्पष्टवादी थे, उन्होंने कहा—"सफलता के लिए यह प्रथम आवश्यक है कि इस आन्दोलन का नेतृत्व केवल एक ही के हाथ मे हो। जिस कार्य के अनेक नेता बन

जाते हैं या बनने की इच्छा करते हैं वह काम कदापि पूरा नहीं पड़ता। आप लोग यदि मुझे अपना नेता चुनते हैं तो आपको मेरा साथ देना पड़ेगा। यह याद रखिए कि टर्की, सरकार द्वारा मैं जल्दी ही बागी घोषित किया जाऊँगा—ऐसी परिस्थिति में भी आपको मेरा हुक्म मानना पड़ेगा। जब तक हम लोग अपना उद्देश्य पूर्ण न कर लें तबतक आप लोगों को मुझे अपना मुख्य सेनापति मानना पड़ेगा।" सब लोगों ने एक स्वर से आपकी बात को स्वीकार कर लिया। अब मुस्तफा ने यह दृढ़ धारणा कर ली कि "इतोवा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वावा भोक्ष्यसे महीम्" अर्थात् हारा तो जन्नत है और जीत गया तो पृथ्वी का शासन है।

इन्हीं दिनों एक बार एक अमेरिकन ने मुस्तफा कमालपाशा से पूछा—"यदि आपकी राष्ट्रीय पार्टी असफल हुई तो आप क्या करेंगे?" उन्होंने कहा—"जो देश अपनी स्वतन्त्रता के निमित्त अपना सर्वस्व तक न्यौछावर कर देने को तय्यार हो, वह कदापि असफल नहीं हो सकता। असफलता का यह अर्थ है कि वह देश जीवन-शून्य है।" जिसमें भला इतना आत्मविश्वास हो, वह कैसे गुलामी को स्वीकार कर सकता है? मुस्तफा ने टर्की में जीवन की वह लहर उत्पन्न कर दी कि बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ हैरत में आ गए। जब मित्रराष्ट्रों को उनके जासूसों द्वारा कमालपाशा के इस सुव्यस्थित संगठन की खबर पहुँची तो उनकी छाती दहल गई।

मुस्तफा ने सन् १९१९ के जुलाई महीने में कांग्रेस की एक असाधारण मीटिंग की। इस अधिवेशन में राष्ट्रवादी तुर्कों ने अपने देश की रक्षा के उपाय सोचे। अलीफौआद और रिफतबे

ने मुस्तफा कमालपाशा के आदेशानुसार स्वातंत्र्य-संग्राम की योजना तैयार की। ऐसे कठिन समय में जब कि शत्रुओं ने चारों ओर से टर्की को दबा लिया था और टर्की सरकार भी विदेशी विजेताओं के हाथों खेल रही थी, अपना कार्यक्रम निश्चय करके, अपने निश्चित ध्येय की ओर बढ़ना कोई बच्चों का खेल नहीं था। कांग्रेस ने यूनानियों और मित्रराष्ट्रों को अपने देश से मार भगाने का प्रस्ताव पास कर दिया। देश के सद्भाग्य से उसे मुस्तफा कमालपाशा जैसे—अपने निर्धारित मार्ग पर चलनेवाले सपूत मिल गए। बस, फिर क्या था, जो करना था वही करके भी दिखा दिया। इस कांग्रेस ने सबसे महत्व की बात यह की कि उसने टर्की में राष्ट्रीय-सरकार की घोषणा कर दी और एक राष्ट्रीय पार्लामेण्ट भी कायम कर दी।

कुछ महीनों बाद पुनः कांग्रेस का अधिवेशन करने की आवश्यकता प्रतीत हुई। पहले की बैठक अर्जेरूम में की गई थी। इस बार सिवास नामक स्थान पर की गई। इस अधिवेशन में अर्जेरूम के कांग्रेस की बातें फिर दोहराई गईं और उन पर विस्तार-पूर्वक अपने विचार प्रकट किए गए। इस कांग्रेस में यूरोप के साम्राज्यवादी राष्ट्रों की कूटनीति और चालबाजियों की खूब पोलें खोली गईं और कड़ी आलोचना एवं निन्दा की गई। अमेरिका के राष्ट्रपति विलसन् की १४ शर्तों का मित्रराष्ट्रों द्वारा ठुकराया जाना भी बताया गया और अमेरिका को टर्की के विषय में उदासीन कहा गया। टर्की के समस्त पवित्र एवं धार्मिक स्थानों के अधिकारियों के पास मुस्तफा कमालपाशा ने एक बड़ी प्रभावोत्पादक अपील लिखकर भेजी। दूसरे राष्ट्रों के पास अपनी

स्वतंत्रता का घोषणा-पत्र भेजा, जिसमें उन्होंने अपनी स्थिति को भली प्रकार स्पष्ट कर दिया था। उसमें नई सरकार स्थापित करने की अनिवार्य आवश्यकता के कारण, यूनानियों द्वारा टर्की की भयंकर हानि और उनके अत्याचार, कुस्तुनतुनियाँ के सरकार की अकर्मण्यता आदि सभी बातें अच्छी प्रकार साफ़ कर दी गई थीं।

मुस्तफा ने टर्की की पुरानी सरकार के पास कुस्तुनतुनियाँ में भी एक अपील भेजी, जिसमें लिखा गया—"टर्की की राष्ट्रीय कांग्रेस ने अब यह तय कर लिया है कि अपने देश और जाति की आजादी के लिए वह कुछ उठा न रखेगी। राष्ट्रवादी तुर्क अपने देश की स्वतंत्रता के लिए हँसते हुए सर्वस्व अर्पण कर देने को तैयार हैं। परन्तु अपना काम आरम्भ करने के पूर्व हम यह उचित समझते हैं कि एक बार आपसे अपने देश और जाति की रक्षा के लिए खड़े हो जाने की प्रार्थना की जाय। हमें आशा है कि आप शत्रुओं की अक्ल ठिकाने लगाने के लिए एक बार अवश्य खड़े हो जायेंगे। हमलोग आपके साथ हैं।" इत्यादि बातें तार द्वारा टर्की सरकार के पास भेजी गई और उसमें यह भी लिख दिया कि "इसके उत्तर की प्रतीक्षा में हमलोग तार-घर के पास ठहरे हुए हैं, आप जो उचित समझें हमें उत्तर द्वारा सूचित करें। यदि हमारी इस प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया गया तो हम अपना कार्य आरम्भ कर देंगे। इसका उत्तरदायित्व आपकी सरकार पर होगा। दुनियाँ को अब हम यह दिखा देना चाहते हैं कि तुर्कों में कैसी गजब की शक्ति है और किस प्रकार वह अपने राष्ट्र को स्वतंत्र बना सकने में समर्थ है।" इत्यादि।

इस अपील के उत्तर की प्रतीक्षा में वे लोग जो तार देने आए थे तार-घर पर बहुत देर तक ठहरे रहे। परन्तु जब उत्तर नहीं आया तो वे लोग लौट गए। उत्तर आने भी क्यों लगा था? मित्रराष्ट्र टर्की के सुलतान को गोदी में खिला रहे थे, उसे मीठी-मीठी थपकियाँ देकर सुला रहे थे। वे उसे जो कहते वही वह करता था या कर सकता था। जब मित्रराष्ट्रों को मुस्तफा कमाल की इन बातों का पता लगा तो उन्होंने सुलतान के द्वारा मुस्तफा के पास हुक्म भिजवाया कि "या तो तुम फौरन कुस्तुनतुनियाँ हाजिर हो या सेनापति के पद से अलग हो जाओ।" अभी तक कमाल-पाशा सुलतान को खलीफा होने के कारण पूज्य एवं मान्यदृष्टि से देखते थे, परन्तु यह आज्ञा पाकर उन्होंने निश्चय कर लिया कि "सुलतान अब मुसलमानों का शुभचिन्तक नहीं, बल्कि गैर-मुसलमानों का गुलाम बन चुका है। इसलिए अब मैं उसकी आज्ञा नहीं मानूँगा।" मुस्तफा के इन्हीं विचारों का उनके सभी अनुयायियों ने अनुसरण किया। मुस्तफा कमालपाशा ने तार द्वारा सुलतान को जवाब दिया—"जब तक टर्की पूर्ण स्वतंत्र नहीं हो जाता तब तक मैं अनातूलिया में ही रहूँगा।" आपने अपने साथियो को कहा—"अब हमे बड़े सङ्कट मे से गुजरना है। हमारी सरकार भी हमारे विरुद्ध हो गई है। बहुत सम्भव है कि मित्रराष्ट्रो की कूटनीति के कारण हमे घर में ही लड़ना पड़े। हमें अपने विरोधियों का भारी सामना करना है। विदेशियों से और मौका आया तो स्वदेशियो से भी लड़ना पड़ेगा। बस, अब अपने सामने एक ही लक्ष्य रखो 'या तो जीतो या मर मिटो।'

राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी के बीस सदस्यों ने समझौते का एक

मस्विदा बनाकर टर्की की सरकार के पास भेजा। टर्की की पार्लामेण्ट में यदि यह राष्ट्रीय समझौते का मस्विदा पेश होता तो वह निस्सन्देह स्वीकृत हो जाता; क्योंकि उस पार्लामेण्ट के प्रायः सभी सदस्य मुस्तफा कमालपाशा के विचारों के थे। टर्की की सरकार ने विदेशियों के कहने पर उस पर्लामेण्ट को ही तोड़ दिया था कि 'न रहेगा बाँस और न बजेगी बाँसुरी'। पार्लामेण्ट तोड़ कर ही शान्त नहीं हुए, बल्कि उसके मेम्बरों को देश निकाले की आज्ञा दे दी। वे सब माल्टा में भेज दिए गए। इन्हीं दिनों कुस्तुनतुनियाँ के सभी राष्ट्रवादी लोगों को तंग किया गया। अनेक पत्र-संपादक और व्याख्याता कुस्तुनतुनियाँ से निकाल दिए गए। इस दमन का परिणाम बुरा हुआ। सरकार अक्सर दमन के द्वारा अपना आतंक और सत्ता जमाने की कोशिश करती है, परन्तु फल इसके सदैव विपरीत ही होता देखा गया है। टर्की सरकार ने ऐसा करके अपनी कब्र अपने हाथों ही खोद ली। सभी निर्वासित व्यक्ति मुस्तफा कमालपाशा के पास पहुँचने लगे। परिणाम यह हुआ कि मुस्तफा का बल दिन-प्रति-दिन बढ़ता ही गया और कुस्तुनतुनियाँ की सरकार कमजोर होती चली गई। अब कांग्रेस का दफ्तर सिवास से उठाकर अंगोरा में स्थापित कर दिया गया। सुसंगठित राष्ट्रीय सेना ने मुस्तफा कमाल जैसे चतुर रण-पंडित के नेतृत्व में यूनानियों को अपने देश से मार भगाया। ग्रीकों को जीत लेने के बाद से मुस्तफा कमालपाशा 'गाजी' कहे जाने लगे। फरवरी सन् १९२० में 'सुप्रीम नेशनल असेम्बली' ने गाजी मुस्तफा कमालपाशा को अर्जरूम का गवर्नर घोषित कर दिया। इसके बाद ही राष्ट्रवादी तुर्कों का

बल बहुत बढ़ गया। मित्रराष्ट्र कुस्तुनतुनियाँ की सरकार से सन्धि करना चाहते थे, परन्तु सच्ची सरकार तो मुस्तफा कमाल-पाशा के हाथ में थी। राष्ट्रीय कोष में लगभग एक अरब रुपया वार्षिक आय थी, व्यय भी लगभग इतना ही था और सैनिक बल की तो पूछिए ही नहीं वैसे तो प्रत्येक तुर्क सैनिक था, किन्तु लगभग दो लाख सैनिक सदैव तय्यार रहते थे। शत्रुओं के शस्त्रागारों को लूट कर काफी गोला बारूद भी पास में आ गया था। मित्रराष्ट्रों के गैलीपोली नामक स्थान के शस्त्रागार पर अधिकार कर लिया था। यहाँ से लगभग ८० हजार बन्दूकें, पाँच लाख कारतूस, तेंतीस मशीनगनें और बहुत सी युद्धोपयोगी सामग्री हाथ लगी थीं।

एक बड़ी विचित्र बात यह थी कि मित्रराष्ट्रो की नजर में मुस्तफा कमालपाशा के पास इतनी सेना नहीं थी जितनी कि बताई जाती थी। इसलिए वे इन्हें केवल एक बागी समझते थे। मार्च सन् १९२० में लार्ड कर्जन ने कहा भी था कि "मुस्तफा कमाल-पाशा की फौज इतनी थोड़ी है कि उसे यूनानी सेना ही परास्त कर सकती है।" मित्रराष्ट्र मुस्तफा कमाल से शंकित थे, परन्तु उतने भयभीत नहीं थे, जितनी कि उनकी शक्ति थी। अबतक मित्रराष्ट्र कुस्तुनतुनियाँ में अपने पैर जरूर जमा चुके थे, वे सुल-तान और कमाल के पत्र-व्यवहार को रोक देना चाहते थे, अतएव उन्होंने वहाँ के डाक और तार विभाग पर अपना अधिकार जमा लिया।

अपनी जन्मजात नीति के अनुसार टर्की के शत्रु-राष्ट्रों ने, स्वराज्यवादी टर्कियों के सम्बन्ध में, टर्की के बाहर मुसलमानों

तथा दूसरे लोगों में उनके विरुद्ध प्रचार-कार्य आरम्भ करा दिया। उन्होंने यह बात फैलाई कि "स्वराज्यवादी तुर्क लोग अपने धर्माचार्य खलीफा की आज्ञाओं को नहीं मानते। धार्मिक न्यायानुसार ऐसे लोग प्राणदण्ड पाने के योग्य हैं। ये लोग शान्ति-भंग करते हैं और जनता को भड़का कर सरकार को नष्ट कर देना चाहते हैं, अतएव ऐसे लोग धार्मिक दृष्टि से और राजनीतिक दृष्टि से सजा पाने योग्य हैं।" इत्यादि अनेक दोष राष्ट्रवादी लोगों पर लगा कर उन्हें संसार की नजर से गिराने का प्रयत्न किया गया।

युद्ध

अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए उस समय तुर्कों पर चाहे जितने दोष लगाए गए हों, परन्तु आज हमें मुस्तफा कमालपाशा की दृढ़ता के कारण यह देखने का अवसर प्राप्त हो गया कि 'वे इल्जाम झूठे थे।' जब आजादी की लड़ाई किसी देश में छिड़ जाती है तब यूरोप के साम्राज्यवादी सत्ताधीश उस देश और उसके निवासियों को बदनाम करने की गरज से दूसरे राष्ट्रों मे ऐसा ही प्रचार किया करते हैं—यह इनकी आदत ही है। भारत के विरुद्ध मिस मेयो का 'मदर इंडिया' के रूप में मिथ्या-प्रलाप इसका साक्षी है। तुर्कों के प्रति किए गए मिथ्या आक्षेपों का कुछ परिणाम नहीं निकला, क्योंकि शीघ्र ही संसार ने टर्की के असली रूप को देख लिया।

गाजी मुस्तफा कमालपाशा अपने विचारों के एक ही व्यक्ति हैं। वे अपने सिद्धान्तों के पक्के धनी हैं। उनका कहना है कि "मैं ही टर्की हूँ। जो मेरा विरोधी है, वह टर्की का भी विरोधी है। मुझे नष्ट करना टर्की को नष्ट करना है।" वे विदेशियों को अपने देश में रहने देना नहीं चाहते थे। मित्रराष्ट्रों की विजय के बाद, उन्होंने खुद अपनी आँखों से देखा था कि अंग्रेज और फ्रांसीसी कुस्तुनतुनियाँ के बाजारों में अपना रौब गाँठते फिरते हैं और तुर्की महिलाओं के साथ हँसी-मजाक करते हैं। ये बातें मुस्तफा कमाल कब सह सकते थे? उनके खून मे गर्मी थी और स्वाभिमान रग-रग में भरा हुआ था। उन्होंने एक बार जोश में आकर कहा—"इन अंग्रेजों को थोड़े ही दिनों मे मालूम पड़ जायगा कि तुर्क उनसे किसी भी बात में कम नहीं हैं। एक समय आ रहा है कि झख मार कर इन्हे हमारे साथ बराबरी का व्यवहार करना पड़ेगा। हम इनके सामने कभी सिर नही झुकाने के। जब तक एक भी तुर्क जीवित रहेगा, तब तक हम अपनी स्वतंत्रता के लिए शत्रुओं से लोहा लेते रहेगे।" एक समय उन्होंने फ्रांस के एक प्रतिनिधि से भी कहा था "तुम चाहे सीरिया ले लो या अरब पर कब्जा कर लो, इससे हमें कोई प्रयोजन नही, परन्तु टर्की को हाथ लगाया तो ठीक न होगा। हमलोग भी प्रत्येक स्वतंत्र राष्ट्र और जाति की भांति स्वतंत्र रहना चाहते हैं, इससे कम या ज्याद: एक तिल भर भी नही चाहते।"

मुस्तफा कमाल इन दिनों बड़ी ही सावधानी से काम कर रहे थे। वे प्रस्ताव पास कराने की उलझन मे नहीं [illegible]। प्रस्ताव पास कराने की वाहवाही लूटना और [illegible]

उसे कागजी बना देना उन्हें पसन्द नहीं था। वे जिस बात को प्रकट करते, तत्काल कार्यरूप में परिणत कर देते थे। जब तक वे किसी कार्य को करना नहीं चाहते, तब तक किसी पर भी अपने विचारों को प्रकट नहीं होने देते थे। इसी एक अनुपम गुण के कारण उन्होंने अपने कार्य में सफलता प्राप्त की।

मुस्तफा कमाल ने मित्रराष्ट्रों के खिलौने टर्की सुलतान की नितान्त अकर्मण्यता देख कर, अब अपने हाथों टर्की की रक्षा करने का पक्का—दृढ़ विचार कर लिया। रऊद, अलीफऊद और रिफैत इन तीनों को उन्होंने अपना लिया। इनके साथ और फौज के अफसरों के साथ उन्होंने गाँवों में दौरा किया। देहातियों को उन्होंने समझाया कि "सुलतान ने मुझे टर्की की रक्षा का भार सौंपा है। विदेशियों ने तुर्किस्तान में अपना राज्य जमाना शुरू कर दिया है। इसलिए अब आप लोग हथियार उठाओ और मेरी फौज में शामिल हो जाओ। आप लोग जब डट कर उनका मुकाबला करेंगे तभी अपने देश की रक्षा कर सकेंगे।" इस प्रकार लोगों को समझाते हुए वे गाँव-गाँव घूमने लगे। जहाँ वे पहुँचे, उन्होंने लोगों के मृतप्राय हृदय में अच्छा प्रभाव उत्पन्न कर दिया। एक गाँव के एक व्यक्ति ने तीन सौ स्वयंसेवक सैनिक कवायद-परेड सिखाकर तय्यार किए और उनके सहित कमालपाशा के झण्डे के नीचे आ पहुँचा। गांवों में स्वयंसेवकों की भर्ती खूब धड़ल्ले से होने लगी। टैक्स कुस्तुनतुनियाँ की सरकार को न देकर अनातूलिया की सरकार को दिया जाने लगा। साथ ही उन्होंने यह भी प्रचार किया कि सुलतान को किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचाई जावेगी। यद्यपि आगे चलकर मुस्तफा ने खलीफा

को तख्त से उतार कर अलग कर दिया, तथापि इस समय यदि इस नीति से वे काम न लेते तो सफलता पाना कष्ट-साध्य ही नहीं बल्कि दुस्साध्य था। उन्होंने लोगों को समझाया "सुलतान शत्रुओं के हाथ की कठपुतली बना हुआ है और उसके सलाहकार खुशामदी, चापलूस और डरपोक हैं। मैं तो सिर्फ उसके सलाहकार और विदेशियों का विरोधी हूँ ! सुलतान का मैं कुछ भी अहित करना नहीं चाहता।" मुस्तफा की इस चालाकी का अच्छा प्रभाव पड़ा और सुलतान के अनन्य भक्त फियाजिम तक को उन्होंने अपनी ओर कर लिया।

कांग्रेस की कार्यकारिणी के चेयरमैन मुस्तफा कमालपाशा थे। लेकिन कांग्रेस के अन्य सदस्य उनकी बात नहीं मानते थे। जनता के प्रतिनिधियों ने कांग्रेस तोड़ देना निश्चय किया और कुस्तुनतुनियाँ में पार्लमेण्ट की बैठक करना चाहा। मुस्तफा कमाल इसके विरुद्ध थे, उन्होने लोगों को समझाया कि "कुस्तुनतुनियाँ में पार्लमेण्ट की बैठक करना खतरे से खाली नहीं है। वहाँ अंग्रेजों की तूती बज रही है। बहुत संभव है वे तुम्हे गिरफ्तार कर लें। इसलिए बजाय कुस्तुनतुनियाँ के अँगोरा में ही पार्लमेण्ट की बैठक करना ठीक है।" किसी ने भी इस बात को नही माना और कुस्तुनतुनियाँ में पार्लमेंट की बैठक की गई। कमालपाशा इस तरह की भूल करने वाले नहीं थे। वे इस बैठक में शामिल नहीं हुए। परिणाम यह हुआ कि अंग्रेजो ने राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओं की गिरफ्तारी करके वहाँ से निकाल बाहर किया और पार्लमेण्ट की बिल्डिंग पर अपना अधिकार कर लिया। कमालपाशा को टर्की सरकार ने बागी करार दे दिया। इस समय सुलतान की

खूब बन पड़ी। इसने धर्म के नाम पर लोगों को भड़काया। गृह-कलह उत्पन्न हो गया। एक दूसरे के खून का प्यासा बन गया। इस विकट-संकटापन्न अवस्था में भी मुस्तफा अपने ध्येय और लक्ष्य पर अटल रहे।

इन दिनों मुस्तफा कमालपाशा की जान खतरे में थी। एक बार उनपर बम् फेंका गया, वे बाल-बाल बच गए। दूसरी बार विष दिया गया, किन्तु प्रह्लाद और मीराबाई की भांति उनपर भी विष का कुछ प्रभाव नहीं पड़ा। इस मुसीबत के अवसर में उन्हें रात दिन काम करना पड़ता था। इन दिनों उनका साथी अरीफ सदैव उनके साथ रहता था। दोनों के घोड़े सदैव कसे तय्यार खड़े रहते थे। ज्योंही संकट का समय आ जावे त्योंही वे उनपर चढ़कर निकल जाने को प्रतिक्षण उद्यत रहते थे। आधी रात तक अरीफ सोता और मुस्तफा कमाल अपना काम करते। अर्द्धरात्रि के पश्चात कमाल सोते तब अरीफ पहरा देता। इस तरह उन्होंने अनेक कष्ट झेलकर अपने देश की स्वतंत्रता को नष्ट होने से बचाया।

ता० १६ मार्च १९२० ई० को मित्रराष्ट्रों ने कुस्तुनतुनियाँ नगर पर अपना अधिकार कर लिया। कुस्तुनतुनियाँ वालों ने ठण्डे दिल से यह सब कुछ देख लिया। जिन इनेगिने लोगों के शरीर में रक्त ने उबाल खाया वे असहायावस्था में होने के कारण अपना जी मसोस कर रह गए। उन्हें खून का घूँट पीना पड़ा। अगर इसके विरुद्ध आग भड़की तो अँगोरा मे या अनातोलिया में। स्मर्ना मे यूनानियो का अड्डा लग रहा था। शाम प्रान्त के बाहर सलेशिया से फ्रांस की सेनाएँ छावनी डाले हुई थी।

कुस्तुनतुनियाँ के चारों ओर इंगलैंड की सेना फैली हुई थी। अर्मे-नियाँ वाले भी आक्रमण की तैयारियाँ कर रहे थे। जिस प्रकार किसी पशु के मर जाने पर गिद्धों, चीलों और कौवे आदि मांस-भोजी प्राणियों का दल उसके आसपास इकट्ठा होकर उसे चट कर जाना चाहता है, उसी तरह यूरोप के लगभग सभी साम्राज्यवादी राष्ट्र पराजित टर्की के मृतप्राय शरीर को चट करने के लिए मँडरा रहे थे। उसकी छाती पर ब्रिटिश जमा हुआ था या यों कहिए कि मक्खन पर तो ब्रिटिश हाथ मारना चाहता था और छाछ से फ्रांस, यूनान आदि को तृप्त करना चाहता था।

यदि इस समय कोई भी टर्की का त्राता था तो केवल गाजी मुस्तफा कमालपाशा और उसका राष्ट्रवादी दल। विदेशियों के कहने-सुनने से इस दल और कमाल को दमन करने के लिए भी टर्की सरकार ने एक सैनिक दल बना दिया था। इस अवस्था में मुस्तफा कमाल अपने ध्येय की पूर्त्ति में संलग्न था। उसके सर पर चारों ओर से विपत्ति के प्रलयंकर बादल घहरा रहे थे। एक नहीं, दो नहीं—यूरोप के सभी राष्ट्र उसकी जान के प्यासे हो रहे थे। टर्की की तत्कालीन यह दशा देख कर किसी को भी भरोसा नहीं होता था कि मुस्तफा कमालपाशा इस संकट के समय में भी अपनी स्वतंत्रता की रक्षा कर सकेगा; परन्तु अपने पथ से च्युत न होने वाले अच्युत कमाल ने असम्भव को सम्भव कर दिखाया। उनके शब्द-कोष में 'असम्भव' शब्द था ही नहीं।

मुस्तफा और उनकी पार्टी को दमन करने के लिए सबसे पहले टर्की सरकार ने अपने सैनिकों को भेजा, परन्तु कमाल ने

उन्हें इस ढंग से छकाया कि वे चुप हो गए। टर्की की सरकार को दबा कर उन्होंने अब विदेशियों की जड़ में छाछ डालने का इरादा किया। अर्मेनियन लोगों ने अँगोरा की सरकार के साथ युद्ध की घोषणा की। राष्ट्रवादी तुर्क तैयार थे ही। दोनो में घमासान युद्ध हुआ, हजारो अर्मेनियन मौत के घाट उतार दिए गए। उनकी राजधानी अरीवान तक तुर्क जा पहुँचे और उस पर अपना कब्जा कर लिया। अपने को बुरा फँसा देख कर अर्मीनियनों ने सन्धि के लिए अपना हाथ पसारा। दिसम्बर १९२० के आरम्भ में मुस्तफा कमालपाशा की सरकार से उन्होंने सन्धि करके छुटकारा पाया।

राष्ट्रवादी तुर्क चारों ओर युद्ध में लगे हुए थे। जब अर्मेनियनो को भगाया जा रहा था, उसी समय फ्रांस वालों से भी छिड़ी हुई थी। २८ एप्रिल १९२० को राष्ट्रवादी तुर्कों की एक सेना ने सलेशिया स्थित फ्रांस की सेना को घेर लिया। दोनों में युद्ध ठन गया। फ्रांसीसियो की बड़ी दुर्गति हुई। उन्होंने सोचा कि अपनी रक्षा करते हुए पीछे हटते चले जावें; परन्तु वे कुछ भी नहीं कर सके, चौकड़ी भूल गए। फ्रांसीसियों ने मुस्तफा से युद्ध बन्द कर देने की प्रार्थना की। मुस्तफा ने अपनी कुछ शर्त्तें पेश की। फ्रांसीसियों ने जब शर्त्तें मंजूर कर लीं तब युद्ध बन्द कर दिया गया; परन्तु यह फ्रांस की केवल एक चालाकी थी। थोड़ा सा विश्राम लेकर उसने अपनी शक्ति को और बढ़ा लिया और जब उसने अपने को मुस्तफा कमाल की सेना से टकराने योग्य समझा तब वह शर्त्तों को तोड़ कर फिर लड़ाई के लिए आ गया। मुस्तफा का बल बहुत बढ़ा

हुआ था। उन्होंने बड़ी ताकत के साथ शत्रु का मुकाबला किया। भयङ्कर मार-काट हुई। फ्रांसीसी घबरा उठे। लड़ाई का सामान छोड़-छोड़ कर भागने लगे। मुस्तफा को शत्रु की कितनी ही तोपें हाथ लगीं। सलेशिया से फ्रांसीसियों को मार भगाया और उस पर अपना झण्डा फहरा दिया। अब फ्रांसीसी चुप होकर बैठ गए। मन की इच्छा मन ही में रह गई।

यूनान और टर्की में बहुत पुरानी शत्रुता चली आ रही थी। यद्यपि यूनान ने यूरोप के इस महायुद्ध में कतई भाग नहीं लिया था तथापि टर्की को कमजोर देख कर और मित्र राष्ट्रों द्वारा उसका बँटवारा होते देख कर, उसने भी इस मौके से लाभ उठाना चाहा। वह सेना सहित टर्की पर चढ़ आया और थके-माँदे टर्की को कुचल कर अपना बदला चुकाया। उसने स्मर्ना पर अधिकार कर लिया और तुर्कों पर अत्याचार करना आरम्भ कर दिया। इस अत्याचार से मुस्लिम संसार में बड़ी खलबली सी मच गई। यदि कोई विजेता राष्ट्र स्मर्ना पर कब्जा कर बैठता तो शायद ही वह मुसलमान जगत की आँखों में खटकता; परन्तु यूनान ने तो टर्की को अब लूट का माल समझ लिया और चढ़ आया। उसकी यह अनधिकार चेष्टा मुस्तफा कमाल-पाशा न सह सके। उन्होने जून सन् १९२० के अंतिम सप्ताह में यूनानियों पर आक्रमण किया। अँगोरा की सरकार के सेनापति इस्मत बे ने यूनानियों को ऐसा खदेड़ा कि बेचारे चौकड़ी भूल गए। आए थे शासन करने; परन्तु जान बचाना कठिन हो गया। अपनी युद्ध-सामग्री छोड़-छोड़ कर भागने लगे। इस युद्ध में, शत्रु-पक्ष के लगभग आठ हजार व्यक्ति

हताहत हुए। २४ अप्रेल १९२१ को यूनानी सेना मुँह की खा कर वैठ गई।

चार महीने बाद जब यूनान की पीठ दूसरों ने थपथपाई तो वह फिर खड़ा हुआ। सितम्बर में एक छोटा सा महाभारत युद्ध हो गया। १७ दिन तक दोनों ओर की सेनाओं ने खूब पैर जमा कर युद्ध किया। इस वक्त सेनापति काजिमपाशा, नूरुद्दीनपाशा और इलमीपाशा ने सेना सहित यूनानियों पर इतने अच्छे ढंग से आक्रमण किया कि यूनानियों को मैदान छोड़ कर भाग जाना पड़ा। इस युद्ध में लगभग ६५००० यूनानी सैनिक हताहत हुए थे।

यूनान अपने बल पर नहीं नाच रहा था। उसे तो दूसरी शक्तियाँ दम-पट्टी देकर खड़ा कर देती थी। यूरोप की अन्य शक्तियों का इसीमें हित था कि वे ऐसे देश को जो यूरोप के महासमर में अपनी शक्ति नहीं खो चुका है, युद्ध के लिए भड़का कर टर्की की रही सही शक्ति को भी निर्बल करा दे। यूनान बार-बार पिट कर भी टर्की से लड़ने को खड़ा हो जाता था। दूसरों के दम-झाँसे में आकर यूनानियो ने अपना बहुत बड़ा नुकसान कर लिया। ब्रिटिश मंत्रि-मंडल अपनी चालें चल रहा था। वह यूनानियों को मदद पहुँचाने का दम-दिलासा भी दे रहा था और अँगोरा की सरकार को उनकी सन्धि के लिए भी लिखापढ़ी कर रहा था। मित्र राष्ट्रों ने कई बैठकें करके अँगोरा सरकार के पास सन्धि की शर्त्तें पेश कीं; परन्तु मुस्तफा कमालपाशा उन रहस्यपूर्ण और चालाकियों से भरी हुई शर्त्तों को स्वीकार करने से स्पष्ट इन्कार करते गए। वे तो विदेशियों

को टर्की में रहने देना ही नहीं चाहते थे। उनका एक मात्र यही कहना था कि "टर्की तुर्कों का है। इस पर तुर्क जाति ही शासन करेगी। दूसरी जाति तब तक यहाँ शासन नहीं कर सकती जब तक कि एक भी तुर्क जीवित है। हमारे देश में हम किसी की दस्तन्दाजी या सलाह नहीं मानना चाहते।" और मित्र राष्ट्र किसी भी तरह टर्की में अपना कदम जमाए रखना चाहते थे। उनका तो सिद्धान्त है कि "यदि अँगुली हाथ में रही तो पहुँचा (कलाई) भी कभी-न-कभी पकड़ा जा सकता है।" मुस्तफा कमालपाशा इन सब चालाकियों को अच्छी तरह समझते थे।

इन सन्धि परिषदों में और शर्तें पेश करने में लगभग एक वर्ष का समय निकल गया। अन्त में मुस्तफा कमालपाशा ने इन छलपूर्ण बातों में न आकर यूनानियों की ऐसी कमर तोड़ दी कि फिर वे नहीं उठने पाए।

ब्रिटिश जाति बड़ी ही बुद्धिमान है। स्वार्थ-साधन में तो वह संसार के सभी राष्ट्रों के कान काटती है। वह अँगोरा सरकार की इस बढ़ी-चढ़ी शक्ति को अच्छी तरह समझ रही थी। अंग्रेज, विजयी राष्ट्रों पर टर्की को प्रभाव जमाते देख कर भी प्रकट रूप में कुछ नहीं करते थे। वे किसी उपयुक्त समय की ताक में थे। मन-ही-मन मुस्तफा कमालपाशा पर जले भुने जाते थे; किन्तु उनकी बढ़ी हुई शक्ति देख कर मैदान मे आने से घबराते थे। वे सोच रहे थे कि दूसरे विजित राष्ट्र भले ही टर्की में न रहे; किन्तु ब्रिटिश का यूनियन जैक कुस्तुनतुनियाँ पर फहराता रहे। ब्रिटिश बिना खून-खराबी के

ही टर्की में जमा रहना चाहता था। लगातार ५ वर्ष तक यूरोप के महायुद्ध में लगे रहने के कारण अंग्रेजों की शक्ति और सम्पत्ति नष्ट हो चुकी थी। एक बात यह भी थी कि इंगलैण्ड से फौजें लाकर टर्की में युद्ध करना बड़ा ही कष्टसाध्य और व्ययसाध्य कार्य था। इसके अतिरिक्त ब्रिटिश-शासन के अधीन सभी राष्ट्रों में आन्दोलन खड़े हो गए थे। आयर्लैण्ड और मिश्र आजाद होने के लिए बेचैन थे ही, इधर भारत में भी असहयोग आन्दोलन बड़े वेग से चल रहा था। इसी बीच पंजाब का जलियानवाला काण्ड हो गया। उधर इंगलैण्ड में भी दो दल हो गए थे, एक तो टर्की के पक्ष में था और दूसरा यूनानियों के। इत्यादि अनेक कारण ऐसे उपस्थित हो गए थे जिनसे ब्रिटिश युद्ध के लिए तैयार नहीं हो सका।

वैसे राष्ट्रवादी तुर्कों के साथ अंग्रेजों का कोई विशेष युद्ध नहीं हुआ, किन्तु छोटी-मोटी लड़ाइयाँ कभी-कभी हो जाती थीं। राष्ट्रवादी लोग अंग्रेजों को टर्की से निकालना चाहते थे और अंग्रेज वहाँ से हटना नहीं चाहते थे। मुस्तफा कमालपाशा ने कुस्तुनतुनियाँ से ५५ मील पश्चिम में अपनी सेना हटा लेने के लिए अंग्रेजों को लिखा। एक बार राष्ट्रवादी तुर्कों ने अंग्रेजी सैनिकों से भरी रेलवे ट्रेन को उड़ाने का प्रयत्न किया; परन्तु रेल-गाड़ी निकल जाने के बाद डेनामाइट द्वारा स्फोट हुआ। जिससे रेलवे लाइन और पुल नष्ट हो गया। तुर्कों ने ब्रिटिश कण्ट्रोल अफसर मि० फॉरेस्ट को गिरफ्तार कर लिया। कर्नल रालि-नसन् और कैप्टेन केमल को पकड़ कर अर्जेरूम में कैद कर लिया। अदाबाजा में लेफ्टीनेण्ट सरण्ट को पकड़ लिया था;

परन्तु बाद में उसे छोड़ दिया। सारांश कि तुर्क लोग अंग्रेजों को छेड़ते ही रहे, उन्हें शान्ति से नहीं बैठने दिया। अंग्रेज लोग सन्धि की उधेड़बुन में लगे हुए थे। वे सेवर्स की सन्धि पर पुनः विचार कराना चाहते थे। अब अंग्रेज उस सन्धिपत्र में से यह शर्त्त हटा कर टर्की को शान्त करना चाहते थे कि "थ्रेस और स्मर्ना को यूनान के हवाले कर देने की जो शर्त्त है वह निकाल दी जावे।" परन्तु मुस्तफा कमालपाशा तो अपने मुल्क की एक इंच जमीन बिना हजारों टर्कों की बलि चढ़ाए देना नहीं चाहते थे। लॉर्ड कर्जन ने भी यूनान और टर्की में मित्रता कराने की बहुत चेष्टा की, परन्तु मुस्तफा बड़े सतर्क थे। वे किसी भी स्वार्थी साम्राज्यवादी राष्ट्र से हाथ मिलाने को तैयार नहीं थे।

सेवर्स की सन्धि एक छल-कपट पूर्ण सन्धि थी। "डेली एक्सप्रेस" ने जो इस सन्धि पर अपने विचार प्रकट किए थे, वे सच थे कि "इस सन्धि के कारण कभी शान्ति स्थापित नहीं की जा सकती। आए दिन एक-न-एक झगड़ा खड़ा होता ही रहेगा। इस सन्धि की शर्त्तें पूर्वीय यूरोप में आग सुलगाने में सहायक रहेंगी। इनके द्वारा जो आग भड़केगी वह एक दिन तमाम बल्कान में फैल सकती है। अतएव सबसे अच्छी बात तो यह है कि इस सन्धि-पत्र को रद्दी कागज समझ कर फाड़ फेंका जाय। टर्की के मामले में फिर से नया बन्दोबस्त होना चाहिए और यह तभी हो सकेगा, जब कि टर्की के वे प्रान्त जो यूनान के कब्जे में हैं वापस लौटा दिए जावें। यूनान न तो उन स्थानों पर अपना अधिकार रखने की क्षमता ही रखता

है और न न्यायतः उसका उन स्थानों पर कोई अधिकार ही है।" जब अंग्रेजी पत्र तक इस सन्धि-पत्र की असलियत को इस रूप में जनता के सामने रखता है, तो मुस्तफा कमालपाशा उसकी कितनी कीमत करता होगा ? यह सहज ही जाना जा सकता है। इसलिए उन्होंने सेवर्स की सन्धि को केवल कागजी खाना पूरी समझ कर उसको ठुकरा दिया और तनिक भी चिन्ता नहीं की।

१३

सन्धि की चेष्टा

मित्रराष्ट्रों की ओर से लन्दन में सन्धि कान्फ्रेंस की योजना की गई। इसमें सम्मिलित होने के लिए टर्की की पुरानी सरकार के पास निमंत्रण आया। ता० ३० जनवरी १९२१ को टर्की सरकार ने उस निमंत्रण पत्र के उत्तर मे लिखा "निमंत्रण के लिए धन्यवाद। किन्तु सम्मिलित होने के लिए निवेदन है कि टर्की की नई राष्ट्रीय सरकार से सलाह लिए बिना हम अपना कोई प्रतिनिधि नहीं भेज सकते। जब अँगोरा सरकार और कुस्तुनतुनियाँ सरकार के बीच तार के द्वारा समाचार आने-जाने की व्यवस्था हो जावेगी तब आपको कुछ निश्चित रूप से उत्तर दिया जा सकेगा।"

कुस्तुनतुनियाँ से अँगोरा सरकार को जब इस निमन्त्रण के सम्बन्ध में लिखा गया, तब कमालपाशा ने राष्ट्रीय सरकार के सभापति की हैसियत से पत्र द्वारा जवाब दिया—"इस समय राष्ट्रीय सरकार ही एक मात्र टर्की की सरकार है। मुझे जनता ने इस सरकार का सभापति चुना है। जब तक मित्र-राष्ट्र अँगोरा की सरकार को सीधा पत्र लिख कर सन्धि कान्फ्रेन्स में सम्मिलित होने के लिए आमन्त्रित नहीं करेंगे, तब तक वह अपने प्रतिनिधि भेजने का विचार नहीं कर सकती। साथ ही वे निमंत्रण भी तभी दें, जब कि हमारी निम्नलिखित शर्तें वे मानते हों—

१—हमारे देश के जिस प्रान्त में यूरोपियन राष्ट्रों ने अपना कब्जा कर रखा है, उसे वे फौरन छोड़ दें।

२—हमारी सरकार किसी राष्ट्र को युद्ध-व्यय के रूप में क्षतिपूर्त्ति में कोई रकम देने के लिए विवश न की जाय।

३—कुस्तुनतुनियाँ का मंत्रि-मण्डल, जो कि अयोग्य है, एक दम अपना स्तीफा देकर अलग हो जाय।

४—सुलतान इस्तम्बोल मुकाम पर रहें।

५—टर्की से दूसरे देशों की समस्त सेनाएँ हटा ली जावें।"

मुस्तफा कमालपाशा यूरोपियन कूटनीति को अच्छी तरह समझते थे। वे मित्रराष्ट्रों के चकमे में आ जाने वाले नहीं थे और वे इस समय तो अच्छी तरह फूँक-फूँक कर कदम रख रहे थे। वे अपनी जरा सी भूल से टर्की को मुसीबत में देखना नहीं चाहते थे। सन्धि-चर्चा के समय अँगोरा सरकार ने युद्ध बन्द कर देने की घोषणा कर दी। मुस्तफा कमालपाशा

व्यर्थ ही नरसंहार करने के विरोधी थे। वे बड़े ही शान्तिप्रिय थे, किन्तु अत्याचारों के सहने की उनमें बिलकुल शक्ति नहीं थी। उनके उत्तर में लिखी गई शर्तों को कुस्तुनतुनियाँ की सरकार ने और मित्रराष्ट्रों ने अधिकांश मान लीं। अँगोरा सरकार स्वतन्त्र रूप से निमन्त्रित की गई। ता० ९ फरवरी सन् १९२१ को राष्ट्रीय सरकार के प्रतिनिधि लण्डन (इंगलैण्ड) के लिए रवाना हुए। लोगों ने प्रतिनिधियों की बिदाई में बड़ी दिलचस्पी ली। सारा नगर सजाया गया। सर्वत्र विजय-पताकाएँ फहराई गईं। उन्हे बिदा करने के लिए आबालवृद्ध-नरनारी सभी इकट्ठे हुए। उन्हें बिदा करते समय मुस्तफा कमालपाशा ने कहा—"आप लोग जिस कार्य के लिए आज बिदा किये जा रहे हैं, वह आपका नहीं बल्कि टर्की कौम का है। आज आप लोगों के हाथों अपने देश, जाति और राष्ट्र के स्वत्वों की रक्षा का कार्य सौंपा गया है। अपनी और मुल्क की आजादी सुरक्षित रखने के लिए आप लोग पहाड़ की तरह अपने सिद्धान्तों पर अविचलित रहना।" बड़े जयघोष और हर्षध्वनि के साथ प्रतिनिधियों को बिदा किया गया। उनके चले जाने के बाद सायंकालीन नमाज अदा की, जिसमें उन्हे सफलता की प्राप्ति के लिए ईश्वर से प्रार्थना की गई।

सन् १९२१ की फरवरी के अन्त में सन्धि-परिषद् की बैठक हुई। उसमें जर्मनी, इंगलैण्ड, फ्रांस, आस्ट्रिया, इटली, मिश्र के प्रतिनिधि उपस्थित हुए थे। टर्की की नई सरकार और पुरानी सरकार दोनों की ओर से प्रतिनिधि आए थे। फ्रांस और इटली अपने आर्थिक और सामरिक सलाहकारों को भी परिषद्

में लाए थे। यूनान की ओर से एम. वेनीजेलोस जैसे नीतिज्ञ पहुँचे थे। इस कान्फ्रेंस में दो विषय मुख्यतया विचारणीय थे। एक तो यह कि जर्मनी से सामरिक क्षतिपूर्त्ति कैसे की जाय और दूसरे यह कि टर्की के साथ जो सन्धि हुई, उसमें किन-किन शर्त्तों को घटाया बढ़ाया जाय ?

कान्फ्रेन्स में मित्रराष्ट्रों की ओर से अँगोरा सरकार के प्रतिनिधियों का विशेष सम्मान प्रदर्शित किया गया। उनसे कई राष्ट्रों के प्रतिनिधियों ने अलग-अलग मुलाकात और परामर्श भी किया। फ्रांस और इटली के प्रतिनिधियों का इनसे बहुत कुछ आपसी समझौता सा भो हो गया; परन्तु इंगलैण्ड के लॉयड जॉर्ज यूनान को अपने साथ बाँधे रहने पर तुले हुए थे। कई दिनो तक परिषद् की बैठकें होती रहीं। यूनान का प्रतिनिधि इंगलैण्ड के इशारे पर इस बात पर अड़ा था कि सेवर्स की सन्धि की शर्तें बिलकुल न बदली जावें। इसीमें उसका हित था। परन्तु फ्रांस का प्रतिनिधि यूनान की इस जिद् के विपरीत था। उसने स्पष्ट कह दिया कि "टर्की के स्थानों पर यूनानियों का अधिकार स्थापित होना न्यायोचित नहीं है। टर्की को उसके प्रदेश दे देने चाहिए।" फ्रांस को इस स्पष्टोक्ति का इटली ने भो समर्थन किया।

बहुत बहस-मुबाहसे के बाद यह तय हुआ कि—

१—कुस्तुनतुनियाँ का प्रदेश यूनान को न सौंप कर पंचायती बना लिया जाय और कुस्तुनतुनियाँ में टर्की को ८० से ९० हजार तक सैनिक शक्ति रखने की इजाजत दे दी जाय।

२—स्मर्ना नगर पर ग्रीस का अधिकार रहे, बाकी दूसरे प्रदेश टर्की को दे दिए जावें; परन्तु स्मर्ना नगर पर टर्की का शासन भी किसी रूप में रखा जाय अर्थात् स्मर्ना का बन्दरगाह टर्की के व्यापार के लिए खुला रहे।

३—विदेशी लोग टर्की के न्यायालयों के द्वारा उनके कानूनों के बन्धन में रहे।

सेवर्स की सन्धि में ऐसे परिवर्त्तन करने का विचार मित्र-राष्ट्रों ने किया; परन्तु अँगोरा सरकार के प्रतिनिधियों ने कह दिया कि हम बिना अपनी सरकार की अनुमति प्राप्त किए इस परिवर्त्तन के सम्बन्ध में स्वीकृति नहीं दे सकते और यह कार्य अँगोरा जाकर ही हो सकता है। इस सन्धि-परिषद् में लगभग एक मास व्यतीत हो गया; परन्तु 'दिन भर चले और ढाई कोस" वाली मसल हुई। टर्की की राष्ट्रीय सरकार के प्रतिनिधि मार्च के मध्य में अँगोरा वापस लौट आए। इन्होंने मित्रराष्ट्रों की शर्त्तों को अस्वीकार कर दिया। इस सन्धि परिषद् की बातों को सुन कर मुस्तफा कमालपाशा अच्छी तरह समझ गए कि अब सीधी अँगुली से घी नहीं निकाला जा सकता। वे इन छल-कपट भरी बातों से ताड़ गए कि मित्र-राष्ट्र टर्की को किसी-न-किसी प्रकार अपने चंगुल में फँसाए रखना चाहते है। यह प्रश्न अब मेल-मिलाप, औदार्य, सौजन्य, सद्भाव से नहीं निपटेगा।

मुस्तफा कमालपाशा ने ग्राण्ड नेशनल असेम्बली की एक विशेष बैठक की। उसमे उन्होंने अपने भाषण में कहा "टर्की के भाग्य का निपटारा बातों से होता दिखाई नहीं देता।

ज़बानी जमा-खर्च अब काफी से ज्यादः हो चुका। केवल मौखिक बातचीत से किसी को भी स्वतंत्रता प्राप्त नहीं हो सकती। यदि टर्की में शक्ति है तो वह अपने पुरुषार्थ द्वारा ही अपना उद्धार कर सकती है। मेल-जोल से जो होना था सो हो चुका; अब हथियार उठा लेने की जरूरत है। मित्रराष्ट्रों ने अभी तक हमारा अभिप्राय नहीं समझा। हमने प्रतिनिधि भेज कर यह जाहिर कर दिया था कि हम खून-खराबी नहीं चाहते, यदि आपस में ही समझ लिया जाय तो अच्छा हो; परन्तु वे इसका अनुचित लाभ यह उठाना चाहते हैं कि टर्की के सिर पर जबर्दस्ती लद जावें। हम यूनानियों की न्यायोचित माँगों को स्वीकार करने को तैयार हैं, किन्तु वे तो सब मिल कर टर्की को कुचल देना चाहते हैं—सो नहीं हो सकता। यूनानियों ने सन्धि की बातों को न मान कर संसार के सामने यह प्रकट कर दिया है कि टर्की न्याय-मार्ग पर है। हम लोग अपने देश के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर सकते हैं। हमारे पास इतनी विपुल युद्ध-सामग्री है कि हम बहुत दिनों तक अपने शत्रुओं से जम कर लोहा ले सकते हैं।

भाइयो! यह हमारी परीक्षा का समय है। तुर्क हमेशा से अपने मुल्क और अपनी कौम के लिए बलिदान होते आए हैं। हम सब लोगों को एकमत होकर गैर तुर्क राष्ट्रों के विरुद्ध खड़े हो जाना चाहिए—फिर आप देखेंगे कि आपके चरणों पर विजय कैसे लोटती है?"

मुस्तफा कमालपाशा का यह वीरगर्जन सुन कर तुर्कों को जोश आया और वह घमासान युद्ध हुआ, जिसका वर्णन

हम पीछे अभी कर आए हैं। अर्मेनियनों से, फ्रांसीसियों से, यूनानियों से और अंग्रेजों से युद्ध हुआ। सन् १९२१ के अन्त तक फ्रांस, इटली और अर्मेनियनों ने टर्की से समझौता कर लिया; किन्तु यूनान की उछल-कूद अभी कम नहीं हुई थी। वह ब्रिटिश के बल पर कूद रहा था। सन् १९२२ के फरवरी मार्च में फिर सन्धि-परिषद् की बैठक हुई। उसमें अँगोरा सरकार के प्रतिनिधि भी निमन्त्रित हुए। नतीजा कुछ नहीं रहा। टाँय-टाँय फिस्स हो गया। अँगोरा के प्रतिनिधियों ने अपनी पुरानी शर्तें रक्खीं। मित्रराष्ट्रों ने मंजूर नहीं कीं।

१४
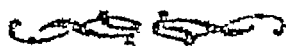
फिर युद्ध हुआ

ब्रिटिश सेनाएँ अभी तक टर्की में डटी हुई थीं। वे सन्धि या विग्रह किसी भी तरह टर्की में जम जाना चाहते थे। जब अपनी शक्ति कम देखते तब सन्धि की चर्चा शुरू कर देते और जब देखते कि अब उनसे टकराने की शक्ति है, तब युद्ध के लिए तैयार हो जाते। इसके अतिरिक्त दो को लड़ा कर, आप भले बन कर, जमे रहने का प्रयत्न भी ब्रिटिश की ओर से होता रहता था। यूनान इनके झाँसे में आ जाता था और बारम्बार मुँह की खाता था। मुस्तफा कमालपाशा ने अंग्रेजों को कई बार फौजें हटा लेने की सूचना दी; परन्तु उन्होंने नहीं हटाईं। इन दिनों फिर एक कान्फ्रेन्स जिनोवा में

की गई। परन्तु नतीजा कुछ नहीं हुआ। यूरोप के राष्ट्र और विशेषत: इंगलैण्ड किसी-न-किसी तरह टर्की में अपना पैर जमाए रहना चाहते थे और मुस्तफा ने उन्हें टर्की से बाहर निकाल देने की कसम खा ली थी। बारम्बार कान्फ्रेन्स करके ये लोग समय बिता रहे थे और अनुकूल अवसर की ताक में थे; परन्तु कमालपाशा अपने उद्देश्य-पूर्त्ति में अकारण विलम्ब नहीं करना चाहते थे। वे अब सब चालबाजियों को समझ गए और उन्होंने युद्ध की घोषणा कर दी। अपने सेनापति का सिंह-गर्जन सुन कर प्रत्येक सैनिक का उत्साह चौगुना हो गया। अभी तक तुर्क लोग कमालपाशा की आज्ञा से ही चुप थे। यूनानियों को प्रत्येक तुर्क मिट्टी मे मिला देने को तैयार था।

मुस्तफा कमालपाशा अपनी सेना सहित विदेशियों को स्वदेश से कान पकड़ कर बाहर निकाल देने की प्रतिज्ञा लेकर चल पड़े। यूनानियों ने स्मर्ना पर अपना अधिकार कर लिया था। टर्की की सेना भूखे भेड़ियों की तरह यूनानियों पर झपटी। यूनानी इस आक्रमण को नहीं सह सके और प्राण ले-लेकर मैदान से भागने लगे। वे लोग स्मर्ना मे जा छिपे। ता० ९ सितम्बर १९२२ को मुस्तफा कमाल ने स्मर्ना घेर लिया और नंगी तलवारें लिए सेना सहित उसमें प्रवेश किया। इसी समय अंग्रेजों की ओर से कैप्टेन थेसिगार ने कमाल को सूचित किया कि यूनानी स्मर्ना से भाग गए हैं, आप निश्चिन्त होकर धीरे-धीरे बिना खून-खराबी किए स्मर्ना में प्रवेश कीजिए, ताकि जनता को किसी प्रकार का भय अथवा कष्ट न होने पावे। तुर्क सेनापतियों ने बात मान ली और धीरे-धीरे नगर में प्रवेश

किया। इसी बीच किसी ने टर्कों के सेनापति पर एक बम फेंका, वह घायल हो गया। इतने पर भी टर्की-फौज शान्त रही और कहीं भी कुछ गड़बड़ नहीं हुई। दो दिन बाद स्मर्ना में भयंकर अग्निकाण्ड हो गया। इस आग लगने का दोष तुर्कों के सिर मढ़ा गया। अंग्रेजी समाचार पत्रों ने तुर्कों को बदनाम किया और दो दिन आग न लगाने का कारण यह बतलाया कि हवा अनुकूल नहीं थी। तुर्कों द्वारा लूट-मार और कत्ल के सम्वाद भी छापे गए। परन्तु संसार ने समझ लिया कि स्मर्ना का अग्निकाण्ड केवल तुर्कों के विरुद्ध लोगों की धारणा उत्पन्न करने के लिए ही रचा गया था। यूनानियों ने अर्मेनियन लोगों की सहायता से शहर में आग लगाई थी।

स्मर्ना से यूनानियों के हटते ही अंग्रेज सामने आए। उन्होंने किसी दूसरे राष्ट्र से सम्मति तक न ली और लड़ाई का शंख फूँक दिया। उसने अपनी विज्ञप्ति में युद्ध का कारण यह बतलाया कि "ग्रेट ब्रिटेन अपने उपनिवेशों और अपने देशवासियों के अस्तित्व की रक्षा के लिए युद्ध के मैदान में उतर रहा है।" ब्रिटिश सेना को तैयार किया गया। सामुद्रिक शक्ति भी बढ़ाई गई। भारत को छोड़ कर ब्रिटिश साम्राज्य के सभी देशों को लड़ाई के लिए तैयार हो जाने का हुक्म दिया गया। इस प्रकार मैदान में आने का एक मात्र कारण यह था कि ब्रिटिश और मित्रराष्ट्रों का खयाल था कि जब हमें मुस्तफा कमाल-पाशा दर्रेदानियाल से निकाल बाहर कर देगा, तब वे मार्मोरा समुद्र में भी अपने जहाजी बेड़े रक्खेंगे। जो यूरोप के सभी राष्ट्रों के लिए सदैव भयप्रद होंगे।

जब ब्रिटेन की विज्ञप्ति के प्रति फ्रांस ने कुछ भी दिलचस्पी नहीं ली तब लार्ड कर्जन पेरिस गए और फ्रांस को अपनी ओर करने का प्रयत्न करने लगे। इस सम्बन्ध में फिर एक मीटिंग की गई। यह मीटिंग भी व्यर्थ सिद्ध हुई। मुस्तफा कमाल-पाशा अपने बनते तो खून-खराबी करना नहीं चाहते थे। उन्हें जब शस्त्र-ग्रहण करने के लिए विवश किया गया, तभी वे मैदान में आए। अंग्रेजों ने तुर्कों को एशिया माइनर, थ्रेस और कुस्तुनतुनियाँ वापस लौटा देने के लिए कहा; किन्तु लौटाए नहीं। इधर यूनानियों को फ्रांस और इटली ने युद्ध-सम्बन्धी सहायता देने से साफ इन्कार कर दिया। यह देख कर ब्रिटेन की विज्ञप्ति और युद्ध-घोषणा भी ठण्ढी पड़ गई। अंग्रेजो ने अकेले पिटना ठीक नहीं समझा।

टर्की सेना ने चानक के पास पहुँच कर, विदेशियों द्वारा अधिकृत स्थानों पर आक्रमण किया। पेरिस में लॉयड जार्ज और लॉर्ड कर्जन ने सूचित किया कि अँगोरा सरकार को कुस्तुन-तुनियाँ, एड्रियानोपल और थ्रेस लौटा दिए जावेंगे; परन्तु मुस्तफा कमालपाशा किसी से दान नहीं चाहते थे। वे अपने पुरुषार्थ से अपने मुल्क को आजाद कर देना चाहते थे। उन्हें यह बहुत ही अखरता था कि विदेशी राष्ट्र आज हमें टर्की की सीमास्थित प्रदेशों के देने की धृष्टता करते हैं। वे होते कौन हैं? टर्की हमारा है और हम उसके हैं।

टर्की सेना ने चानक के पास पहुँच कर मित्रराष्ट्रों द्वारा अधिकृत स्थानों पर अधिकार कर लिया। इस समय जनरल हेरिंगटन ने मुस्तफा कमालपाशा से बातचीत करने की इच्छा

प्रकट की। मुस्तफा साहब ने उसकी बात मंजूर कर ली। अधिकृत स्थानों में शराब का बेचना और खरीदना कमालपाशा ने जुर्म करार दे दिया। फिर सन्धि की चर्चा चली। मुदानियाँ में एक कान्फ्रेन्स बुलाई गई। ता० ३ अक्टूबर को कान्फ्रेन्स की बैठकें शुरू हुईं। बहुत वाद-विवाद के पश्चात् यह तय पाया कि तुर्कों को थ्रेस लौटा दिया जाय और कुस्तुनतुनियाँ की पार्लमेण्ट में राष्ट्रवादी तुर्कों को भी रखा जाय। तुर्क, मित्र-राष्ट्रों द्वारा अधिकृत स्थानों को हमें सौंप दें। इत्यादि

अँगोरा सरकार के प्रतिनिधियो ने, सोवियेट रूस के प्रतिनिधि को बुलाना आवश्यक बतलाया। सन् १९१७ में रूस ने राज्य-सत्तात्मक शासन का अन्त करके प्रजा-सत्तात्मक शासन स्थापित कर लिया था। रूस मे साम्यवाद स्थापित हो चुका था। वह टर्की की इस आजादी की लड़ाई को बड़े ध्यान से देख रहा था। उसने एक बार मुस्तफा कमालपाशा की सरकार के पास एक पत्र भी भेजा था, जिसमें लिखा था—"आप लोगो ने यह जान कर कि पाश्चात्य यूरोप की शक्तियाँ टर्की को परतन्त्रता की जंजीर से बाँधने के मन्सूबे बाँध रही हैं, आपने मुस्तफा कमालपाशा को अपना नेता चुन लिया और उसके आदेश पर जो आपने रूस की तरह अपना सर्वस्व अपने देश की स्वतन्त्रता के लिए अर्पण किया है, इसलिए रूसी लोग आपके साथ सहानुभूति रखते हैं। इस स्वातन्त्र्य-युद्ध में रूस आपका बड़ा भाई है और आपको अन्त तक लड़ने के लिए अनुरोध करता है। साम्राज्य-लोलुप कीड़ों को नष्ट कर दीजिए। लोमड़ी की भाँति किए गए वादों पर धोखा मत खा

जाना। आप अकेले ही नहीं है; बल्कि रूस भी आपके साथ है।" इत्यादि

रूस और टर्की में सन् १९२० के आरम्भ में मित्रता स्थापित हो चुकी थी। बोलशेविक (सोविएट) रूस के प्रतिनिधि अँगोरा सरकार के यहाँ कई बार प्रतिनिधि के रूप में निमन्त्रित हो चुके थे। टर्की सरकार को आवश्यकता पड़ने पर सैनिक सहायता पहुँचाने का भी वादा रूस कर चुका था। अँगोरा सरकार के भी प्रतिनिधि मास्को (रूस) में आते-जाते थे। तुर्क और रूस दोनों एक विचार के होने के कारण दोनों में अच्छी मित्रता हो गई। अँगोरा की सरकार के पास रूस के त्राता महात्मा लेनिन ने एक पत्र भेजा था, जिसमें लिखा था—"आप लोगों को आपकी सफलता पर मैं हृदय से बधाई देता हूँ। आप समस्त राष्ट्रवादी तुर्कों को मेरी ओर से यह सन्देश सुना दीजिए कि उन्होंने अपनी स्वतन्त्रता अक्षुण्ण बनाए रखने में जो त्याग और शौर्य प्रदर्शन किया है, उसके लिए हम आपका अभिनन्दन कर रहे हैं।"

टर्की और रूस में मित्रता थी; इसलिए सन्धि-परिषद् में रूस का प्रतिनिधि न पाकर टर्की के प्रतिनिधियों ने बोलशेविक सरकार के प्रतिनिधि को बुलाने का प्रश्न रखा था। बहुत दिनों के वाद-विवाद के पश्चात् मित्रराष्ट्रों ने टर्की के सम्बन्ध में यह निश्चय किया कि—"यूनानी, थ्रेस खाली कर दें और उस पर मित्रराष्ट्र अपना कब्जा कर लें और एक महीने बाद उस पर टर्की सरकार अपना आधिपत्य स्थापित कर ले।" इत्यादि जैसे-तैसे करके ११ अक्टूबर १९२२ ई० की शाम को

६½ बजे इस अस्थायी सन्धि पर हस्ताक्षर हो गए। युद्ध समाप्त हुआ। मुस्तफा कमालपाशा के गले में जयमाल पड़ी।

इस सन्धि के अनुसार यूनानियों ने थ्रेस खाली कर दिया। वे जिस पर दो वर्षों से अपना पंजा जमाए बैठे थे, उसे ता० १५ की आधी रात को यूनानियों ने अन्तिम प्रणाम की। टर्की ने थ्रेस पर अपना अधिकार कर लिया। ब्रिटेन को मुँह की खानी पड़ी। लॉयड जॉर्ज ने अपने पद से त्यागपत्र देकर अपनी झेंप मिटाई।

१५
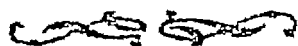
शान्ति-स्थापन

मुदानियाँ-सन्धि से देश मे शान्ति स्थापित हो गई। टर्की के बल के आगे मित्रराष्ट्रों को झुकना पड़ा। अब यह प्रश्न उठा कि सन्धि को स्थायी रूप दे दिया जाय। बैठक कहाँ हो ? यह भी प्रश्न उठा। इस बार यह तय हुआ कि किसी ऐसे देश में यह बैठक की जाय, जो इन झगड़ों से अलिप्त रहा हो। अतएव स्विट्जरलैण्ड के लासेन नगर में कान्फरेन्स की मीटिंग होना तय पाया गया। परन्तु इटली में विद्रोह हो जाने से और यूनान में राज-विप्लव के कारण तथा लॉयड जॉर्ज के पदत्याग से कान्फ्रेन्स ता० ६ नवम्बर को न होकर ता० २५ से आरम्भ हुई।

इस कान्फ्रेन्स में सोवियेट रूस के प्रतिनिधि को बुलाने के लिए टर्की ने जोर दिया। मित्रराष्ट्र यह नहीं चाहते थे। खैर, किसी शर्त्त पर बुलाना मंजूर कर लिया। अंग्रेज कूटनीतिज्ञों ने टर्की में फूट पैदा करने के लिये टर्की के सुलतान को भी निमंत्रण दे दिया। यह जान कर अँगोरा सरकार ने स्पष्ट कह दिया कि यह हमारा अपमान है और ऐसी स्थिति में हम अपने प्रतिनिधि नही भेजेंगे। बड़ी लिखापढ़ी के बाद यह झगड़ा भी तमाम हुआ। कुस्तुनतुनियाँ के वजीर ने अपनी हार मंजूर कर ली।

अंग्रेजों ने अब दूसरा अड़ंगा खड़ा कर दिया कि तुर्कों के इस युद्ध में हमारा ७½ करोड़ रुपया खर्च हुआ है, वह हमें दिलाया जाय। मुस्तफा कमालपाशा की सरकार ने बड़ी होशियारी से यह खर्च यूनानियों पर सिद्ध कर दिया और साथ ही कुस्तुनतुनियाँ की सरकार से लिया हुआ कर्जा देना भी नामंजूर कर दिया।

इन दिनों अँगोरा की सरकार अपने विजय की खुशी में वेफिक्र नहीं बैठी थी। उसने अपनी सैनिक-शक्ति को बढ़ाना शुरू कर दिया। कमालपाशा की यह गतिविधि देख कर, यूरोप के तमाम राष्ट्र और अंग्रेजी समाचार पत्र तोबा-तिल्ला मचा उठे। जैसे-तैसे यह सन्धि-परिषद् पूर्ण हुई और टर्की सफल मनोरथ हुआ।

१६

दुश्मन ताकते ही रह गए

यूरोप-महासमर समाप्त होने पर अपने शत्रु, जर्मनी को सहायता देने वाले टर्की को, मित्रराष्ट्र आपस में बाँट कर उसका अस्तित्व मिटा देने के मन्सूबे गाँठ रहे थे। फ्रांस किस प्रदेश का अधिपति बनाया जाय? इंगलैण्ड का कब्जा किन-किन मुकामों मे रहे? इटली किस भाग का अधिकारी हो और यूनान को क्या दिया जाय? इत्यादि बातो पर प्रत्येक देश के प्रतिनिधि पेरिस मे बैठे विचार कर रहे थे। प्रेसीडेण्ट विलसन, लॉयड जॉर्ज, क्लेमेंशो आदि कूटनीति विशारद प्रसन्न मन से टर्की को बाँट कर हड़प जाने का जाल बना रहे थे। इंगलैण्ड का दाँत मूसल की तेल की खानों पर था; परन्तु

टर्की का तरुण सिंह मुस्तफा कमालपाशा इनकी इस बन्दर-बँटौती को देख कर गुर्रा उठा और जब यह देखा कि टर्की से मित्रराष्ट्रों की शक्ति बिलकुल हट गई और टर्की में प्रजातन्त्र कायम हो गया, तब निर्बल समझ कर उसे चट कर जाने वाले दुश्मन टापते ही रह गए। वे आश्चर्य में डूब गए। सारे मन्सूबे काफूर हो गए और वे कहने लगे—"अरे! यह यूरोप का बीमार बुड्ढा तो मर चुका था न? यह कटखना नौजवान कैसे बन गया?" इत्यादि। बेचारे मित्रराष्ट्र देखते ही रह गए। उनके सारे मन्सूबों पर पानी फिर गया।

टर्की स्वतन्त्र हो गया। प्रजातन्त्र राज्य स्थापित हो गया। सब मुँह की खा चुके; किन्तु फिर भी तुर्कों में फूट पैदा करके उस पर अधिकार जमाने का प्रयत्न होता ही रहा। यूरोप के कुछ राष्ट्र बड़े ही परोपकारी, उदारचेता और दूसरों की भलाई चाहने वाले हैं!!! वे टर्की के हित के लिए वहाँ अपना शासन स्थापित करना चाहते थे!! अंग्रेजों ने कुर्दों को अपना साधन बनाया और मुस्तफा कमालपाशा के दोषों को दिखा-दिखा कर उनके विरुद्ध तैयार करने लगे। मुल्ला और दरवेश तो पहले ही कमाल से नाराज थे; क्योंकि उन्होंने इनके स्वार्थ-साधन मे बाधा उत्पन्न कर दी थी। इसलिए इन लोगों ने "दीन खतरे में" का होहल्ला मचा कर कुर्दों को उकसाया। जहाँ-तहाँ "अँगोरा की काफिर सरकार का नाश हो" और "सुलतान खलीफा की जय" के नारे सुनाई पड़ने लगे। कुर्दों ने दो महीने में ही टर्की के कई प्रदेशों पर अपना अधिकार भी जमा लिया।

कमालपाशा कुर्दों की इन हरकतों के रहस्य को भली प्रकार समझते थे और उन्हें प्रोत्साहित करने वाली शक्ति को भी जानते थे। उन्होंने तुर्कों से कहा—"टर्की फिर खतरे में है। इन कुर्दों की पीठ पर यूरोप की किसी प्रबल शक्ति का हाथ है। इन्हें बाहर से रुपए और हथियार दिए जा रहे हैं। इसलिए आप लोग खड़े होकर इनका सामना कीजिए।" यह सुनते ही आजादी के दीवानों ने हथियार उठा लिए।

तुर्कों में राष्ट्रीयता भरी हुई थी। वे अपने देश की आजादी खोना नहीं चाहते थे। गुलाम बनने से पहले वे मौत की इच्छा रखते थे—यही कारण है कि वे लोग कमालपाशा के गुणों की ओर ही ध्यान देते थे, अवगुणों की ओर नहीं। दुश्मनों द्वारा कमाल के सम्बन्ध में अनेक बुराइयाँ फैलाई जाती थीं। कमाल व्यभिचारी है, शराबी है, जुआरी है इत्यादि बातों का प्रचार किया जाता था; परन्तु राष्ट्रवादी तुर्क लोग इन बातों की ओर ध्यान ही नहीं देते थे। वे देख रहे थे कि मुस्तफा कमालपाशा में आजादी की तड़पन है, लगन है, अदम्य उत्साह है और बुद्धि है। भारत-वासियों की भाँति वे अपने नेता के दोष देखने में ही नहीं लगे हुए थे। अपने ऐसे औदार्य के कारण ही टर्की आज आजाद है। अस्तु—

तुर्क लोग कमालपाशा के इशारे पर कुर्दों से भिड़ गए। उन्हें ऐसा दबा दिया गया कि उन्होंने फिर सिर ही नहीं उठाया। कुर्दों के दमन के बाद असेम्बली में कमाल ने कहा था—"कुर्दों की क्या मजाल थी जो इस प्रकार साहस करते! देश-द्रोही तुर्कों और ब्रिटेन ने उन्हें भड़काया। अँग्रेजों ने कुर्दों से बड़े-बड़े

चाहिएँ और बुरी छोड़नी चाहिएँ। सबसे पहले उन्होंने लोगों का ध्यान स्वदेशी की ओर आकर्षित किया। अपने माल की खपत के लिए विदेशी माल पर बड़े-बड़े टैक्स लगा दिए, ताकि लोग उन्हें न खरीदें। उन्होंने लोगों से कहा—"मैंचेस्टर के भड़कदार कपड़ों की जगह टर्की का बना हुआ मोटा कपड़ा पहनो।" किसानों से कहा—"खेती की ओर ध्यान दो।" व्यापारियों से कहा—"अपने देश के व्यापार की वृद्धि करो।" इस प्रकार उन्होंने समस्त टर्की में स्वदेशी का शंख फूँक दिया। मुस्तफा स्वयं खेती के काम में बहुत ही दिलचस्पी लेते थे। वे खेती करते थे और हल तक चलाते थे। भारतीय उन बाबुओं को जरा अपनी दशा पर ध्यान देना चाहिए जो चटकीले-भड़कीले कपड़ों के लिफाफे बने फिरते हैं, सिर के बालों को सँवारने में ही अपने कर्त्तव्य की इति-श्री समझते हैं और अपने घर में झाड़ू-बुहारी निकालना भी अपनी शान के विरुद्ध मानते हैं। जब तक मुस्तफा कमालपाशा की भाँति हमारे देश के लोग कर्त्तव्य-परायण नहीं होंगे तब तक गुलामी से छुट्टी पाने की क्या आशा की जाय?

कमाल ने किसानों के हित के लिए कुछ भी उठा नहीं रखा। उनके हितार्थ अनेक बैंक और को-आपरेटिव सोसाइटीज (Co-operative Societies) स्थापित की गईं। नहरें निकाली गईं। सड़कें बनवाईं—रेलें चलाईं।

विजयी होते ही कुछ लोगों ने उन्हें कहा कि "आप संसार भर के मुसलमानों के रक्षक बन जाइए।" कमालपाशा ने स्पष्ट शब्दों में कहा—"मैं केवल यह चाहता हूँ कि प्रत्येक मुसलमान

भाई आजाद हों। बस, इससे अधिक मैं और कुछ नहीं चाहता। मुझे किसी भी मुस्लिम-राष्ट्र-संघ में या टर्की के संघ में न तो विश्वास ही है और न श्रद्धा ही। हमें तो अपना एक मात्र लक्ष्य यह स्थापित कर लेना चाहिए कि टर्की की सीमा में कोई दूसरी ताकत पैर न रख सके। हमें दूसरों के बहकावे में नहीं आना चाहिए। इन खयालातों को मस्तिष्क से निकाल फेंको। इन्हीं बातों ने हमें बहुत नुकसान पहुँचाया है।" लोगों ने कमालपाशा को कहा "आप खलीफा बन जाइये"; परन्तु वे तो अपने उन्नत विचारों के धनी थे। उन्होंने ऐसे पद के प्रलोभन को ठुकराते हुए कहा—"ठीक है, परन्तु मैं दूसरे देश के मुसलमानों से अपनी बातें कैसे मनवा सकूँगा। आप लोग यदि इस बात का विश्वास दिलाते हों तो मैं जरूर खलीफा बन जाने को तय्यार हूँ।"

आपने लोगों को साक्षर बनाने का कार्य अपने ही हाथ में लिया। कुस्तुनतुनियाँ में एक बड़ा भारी दरबार किया, उस में आपने खड़िया मिट्टी (चाक) हाथ में ली और काले तख्ते (Black board) पर नई टर्की-लिपि (लैटिन) लिख कर लोगों को समझाने लगे। गाँव-गाँव में दौरा किया और लोगों को अक्षर-ज्ञान कराया। एक डिक्टेटर, टीचर का कार्य करने लग गया। एक दिन आप नृत्यशाला में नाचते-नाचते खड़िया उठा कर लोगों को अक्षर-ज्ञान कराने लगे। जो व्यक्ति अपने धुन का इतना पक्का हो, वह क्या नहीं कर सकता ?

टर्की मे मुस्तफा कमालपाशा ने फौजदारी, दीवानी और व्यापारिक कानून बनाए। जर्मनी के व्यापारिक कानून की,

स्विटजरलैण्ड के दीवानी कानून की और इटली के फौजदारी कानून की उन्होंने अपने देश में नकल की। उन्होंने जो जिस देश में अच्छी बात पाई उसे ही अपने यहाँ प्रचलित की। अपने देश में शुद्ध टर्की भाषा का प्रचार कराया। अर्बी फारसी के जो शब्द टर्की भाषा मे घुस गए थे, उन्हे निकलवा दिया। शिक्षा टर्की में दी जाने लगी—अध्यापक टर्की रखे गए। कुरानशरीफ का अनुवाद टर्की भाषा में करा दिया और हुक्म निकाल दिया कि मस्जिदों में नमाजें टर्की भाषा में ही पढ़ी जावें। कम्पनियों में टर्की की पूँजी हो और उनमें डाइरेक्टर भी तुर्क ही हों। हिसाब-किताब टर्की भाषा में रखा जाय। ट्रेडमार्क टर्की के हों। टर्की में सिवाय तुर्कों के कोई भी व्यक्ति डाक्टरी, वकालत आदि न कर सके। इस प्रकार मुस्तफा कमालपाशा की बदौलत सर्वत्र टर्की ही टर्की बन गया। टर्की, टर्कीमय हो गया।

स्त्री-शिक्षा की ओर आपका ध्यान गया। सबसे पहले पर्दा हटाने का निश्चय किया। स्त्रियाँ पर्दा तोड़ कर खुले आम खुले मुँह आने लगीं। श्रीगणेश अपने घर से ही किया। अपनी पत्नी को खुले मुँह लोगों के सामने ले गए। देखते-देखते तुर्क-स्त्रियों ने पर्दा-प्रथा का अन्त कर दिया। स्त्रियों ने पढ़ना शुरू किया। उन्हें पुरुषों के समान अधिकार दिया गया। स्त्रियाँ वकील, डाक्टर और जज बनाई गईं।

मुस्तफा कमालपाशा का ध्यान अपने राष्ट्र के भावी कर्णधार बच्चों की ओर गया। उन्होंने टर्की में प्रति वर्ष "बाल-सप्ताह" मनाने का हुक्म जारी किया। इस बाल-सप्ताह में

एक दिन ऐसा होता है, जिस दिन सभी सरकारी कर्मचारी अपना-अपना पद नाममात्र को, बच्चों को देते हैं—अर्थात् उस दिन सारे टर्की में बच्चे ही शासन करते हैं।

कमालपाशा को टर्की टोपियाँ अच्छी नहीं जँची। उन्होंने लोगों को टोप (Hat) पहनाने का इरादा किया। यह सुधार अन्य कार्यों की अपेक्षा अधिक कठिन था। उन्होंने सबसे पहले अपने शरीर-रक्षकों (Body-Guards) को कलँगी वाले टोप पहनाए। इसके बाद अपनी सेना मे टोप लगाने की आज्ञा प्रचलित की। किसी ने कान तक नहीं हिलाए और चुपचाप टोप लगाने लगे। अब आपने अपनी प्रजा को टोप पहनाने का इरादा किया। 'ब्लैक सी' (Black Sea) के किनारे आपने टर्की के ग्रामो में दौरा किया। कुस्तामनी नामक स्थान में आपने एक सार्वजनिक सभा की, उस सभा में स्वयं टोप पहन कर पहुँचे। टर्की जनता अपने मालिक को टोप पहने देख कर अचम्भे में रह गई; क्योंकि तुर्क लोगों की दृष्टि मे टोप पशुओं के पहनने की तथा अपवित्र वस्तु थी। मुस्तफा कमालपाशा जनता की ऐसी छूछी रिवाजों को नष्ट कर देना चाहते थे। वे न तो तोप से ही डरते थे और न जनता के विरोध से ही। उन्होंने एक लम्बा-चौड़ा व्याख्यान दिया, जिसमे टोप के फायदे दिखलाए। उन्होंने कहा कि अगर हमें यूरोप के साथ रहना है तो अन्तर्राष्ट्रीय पोशाक पहनना चाहिए—तुर्की टोपी तो असभ्यता की सूचक है। इत्यादि।

मुस्तफा कमालपाशा ने टर्की भर में दौरे किए और जहाँ तहाँ व्याख्यानों द्वारा तुर्कों को टोप लगाने का उपदेश किया;

किन्तु किसी ने भी ध्यान नहीं दिया। जिस प्रकार भारत में महात्मा गांधी के बहुत कुछ कहने-सुनने पर भी लोगों ने खादी पहनना आरम्भ नहीं किया, उसी तरह तुर्कों ने मुस्तफा कमाल-पाशा को टोप पहनने की बातें सुनी-अनसुनी कर दीं। कमाल तो शासक थे न ? उन्होंने जनता को बातों से समझते न देख कर कानून बना दिया कि "टर्की टोपी लगाना कानून के विरुद्ध कार्य है। जो टर्की टोपी प्रयोग करेगा उसे सजा दी जावेगी।" गाँव-गाँव, चौराहों पर और आम रास्तों पर पुलिस तैनात कर दी गई, जो कोई तुर्की टोपी लगाकर निकलता उसकी टोपी पुलीस छीन लेती। इतने पर भी यदि कोई न मानता तो जेलखाने भेज दिया जाता था। तुर्क लोग अपनी व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अपहरण देख कर बड़े ही भड़के। कई गाँवों और शहरों के लोग विरुद्ध खड़े हुए। मुल्ला और मौलवियों ने उन्हें और भड़काया। हजरत मोहम्मद साहब और कुरानशरीफ के नाम पर इस टोप-विरोधी आन्दोलन को धर्म का जामा पहना दिया। असेम्बली में सेनापति नूरुद्दीनपाशा ने टोप का बड़े जोरों के साथ विरोध किया। वहाँ कमालपाशा ने कहा—"क्रान्ति के भवन-निर्माण में, जब तक खून का गारा नहीं बनता तब तक उसकी नींव मजबूत नहीं हो सकती।" इतना कह कर उन्होंने नूरुद्दीन को असेम्बली से निकाल बाहर कर दिया। जिसने टोप का विरोध किया, उसे जेल भेज दिया, फाँसी पर लटका दिया या गोली से मरवा दिया।

कमाल के इस व्यवहार से लोग उन्हें जालिम और अत्या-चारी कहेंगे; परन्तु उनका सिद्धान्त उन्हींके शब्दों में सुन

लीजिए। "लोकतंत्र वहशियों और मूर्खों का शासन है। शासन का सबसे अच्छा रूप तो एक व्यक्ति का एकछत्र शासन है। मैं हरएक से जो चाहूँगा, कराऊँगा। जो हुक्म दूँगा, उसे मनवाऊँगा। मैं किसी की सलाह अथवा मश्विरा भी नहीं सुनूँगा। जो चाहूँगा, वही करूँगा। जो मैं कहूँगा, वही सब लोगों को बिना चीं-चपर किए करना पड़ेगा। मैं अपने राष्ट्र को अँगुली पकड़ कर चलना सिखाऊँगा।" मुस्तफ़ा कमाल-पाशा ने जो सुधार करना चाहा, करके ही छोड़ा। उन्होंने जनता या अधिकारियों के विरोध की जरा भी परवा नहीं की। वहाँ टर्की में दूसरी शक्ति तो थी ही नहीं, जो तुर्कों को बहका कर या भड़का कर अपना उल्लू सीधा करती। टर्की का आतंक यूरोप के सभी राष्ट्रों पर जमा हुआ था, समय अनुकूल था, अन्यथा मुस्तफा कमालपाशा की भी वही दशा होती जो अफगा-निस्तान के बादशाह अमानुल्लाह खाँ की हुई।

मुस्तफा कमाल के रुख को देख कर तुर्कों का विरोध हवा हो गया। सब लोग टोप लगाने लगे। टर्की टोपी का नामोनि-शान नहीं रहा। यहाँ तक कि मुसलमानों के पवित्र स्थान मक्का में जो मुसलमानों की एक कान्फरेन्स भरी, उसमें भी टर्की का प्रतिनिधि हैट, बूट, कोट, पैण्ट, पहने गया था। किसी भी मुसलमान ने चूँ भी नहीं की।

टर्की टोपी की भांति ही मुस्तफा कमालपाशा ने दरवेश और मठों को भी नष्ट कर दिए। मठ तोड़ दिए गए। दरवेशों की जागीरें और जायदादें जब्त कर लीं। मठ और कब्रें खोद कर फिंकवा दीं। दरवेशों से कहा—"अब तक हराम के टुकड़े

खाए, अब मेहनत करके पेट भरो या भूखे मरो।" भीख माँगना राष्ट्र मे जुर्म करार दे दिया गया। विवाह के पहले पति-पत्नी को अपने स्वस्थ होने का प्रमाण-पत्र पेश किए बिना शादी को अवैध करार दे दिया।

पहले टर्की में फोटो लेना धर्म-विरुद्ध कार्य था। परन्तु मुस्तफा कमालपाशा ने, अपनी मूर्तियाँ बनवा कर चौराहों पर खड़ी करा दीं। जिसने उनके रास्ते में रोड़े अटकाए, उसीको मिटा दिया। उन्होंने अपने विरोधी को नष्ट करने में कुछ भी नहीं सोचा। कुस्तुनतुनियाँ में मस्जिद को अजायब घर बना दिया। अपने विरोधी, दरवेशों के मुखिया एक अस्सी वर्ष के बूढ़े शेख साहब को उसके अनुयायियों सहित फाँसी पर लटका दिया। कमाल की इन बातों को देख कर, सहसा मुँह से निकल पड़ता है—

"लोग कहते हैं कि बदलता है जमाना अक्सर।
मर्द वो हैं जो जमाने को बदल देते हैं।"

आपने सुधारों की भी पराकाष्ठा कर दी। कमालपाशा सब कुछ सह सकते थे, परन्तु किसी को जम्हाई लेते देख कर आप बड़े ही क्रुद्ध हो जाते थे। उनके पास कोई जम्हाई नहीं ले सकता था। उनका कहना था कि जो तुर्क जम्हाई लेता है, वह जाति और राष्ट्र का शत्रु है। जम्हाई आलस्य पैदा करती है और आलसी लोग अपने राष्ट्र की कभी भी भलाई नहीं कर सकते। वे कई बार जम्हाई के विरुद्ध भी कानून बनाने का विचार कर चुके थे।

कमालपाशा बाजारों में भी अक्सर घूमा करते थे। जब उन्हें कोई आदमी धीरे-धीरे चलता हुआ सड़क पर दिखाई

देता तो वे उसे ठहरा कर पूछते—"खैर तो है ? क्या आपकी तबीयत खराब है ? मेरी इच्छा है कि आपको अस्पताल भेजवा दिया जाय।" बेचारा धीरे चलने वाला शर्मिन्दा हो जाता। फिर आप उसकी पीठ ठोंक कर कहते—"देखो जिंदगी के दिन थोड़े हैं, इस तरह धीरे-धीरे चलकर अपना वक्त फिजूल क्यों जाया करते हो ? जरा तेजी से चलिए, वर्ना दूसरे तुर्क भी आपकी ही तरह सुस्त हो जावेंगे। चलो, तेज चलो।"

बालवा नामक स्थान में मुस्तफा कमालपाशा ने अच्छे अच्छे हम्माम बनवा दिए। वहाँ का जल विविध रोग नाशक है। आपने अपने राज्य-कर्मचारियों को जल-वायु परिवर्त्तन के लिए जरूरत पड़ने पर वहाँ जाकर रहने का हुक्म दे रखा था। कुस्तुनतुनियाँ आने की मनाही कर दी थी। आपके खयाल शरीफ मे कुस्तुनतुनियाँ आलस्य का केन्द्र था। अपनी इच्छानुसार लोगों को रास्ता दिखा कर कमाल ने टर्की को पूर्ण सभ्य और यूरोप के दूसरे राष्ट्रों के साथ कदम मिला कर चलने योग्य बना दिया। सारांश यह कि सङ्कटकाल में लोकतंत्र से काम नहीं चलता—डिक्टेटर की जरूरत रहती है। फिर वह चाहे मुस्तफा कमालपाशा हों या चाहे महात्मा गान्धी।

कमाल का व्यक्तित्व

मुस्तफा कमालपाशा का व्यक्तित्व बहुत ऊँचा था। वे अपनी बात के धनी थे। पहले तो वे बिना सोचे समझे कुछ करते ही नहीं और किसी काम को कर लेने का दृढ़ निश्चय करलेने के बाद उन्हें कोई अपने सिद्धान्त से विचलित नहीं कर सकता था। उनका यह आचरण ही उन्हें इस उन्नतावस्था में पहुँचाने का कारण बना। आपने अपने परिश्रम और बुद्धि-बल से टर्की को ऐन मौके पर बचा लिया। टर्की के सुलतान को निकाल बाहर कर दिया। खिलाफत का नामोनिशान हटा दिया और जो उनके काम में आड़े आया, उसी को मिटा दिया। वे अव्वल दर्जे के आत्मविश्वासी, निडर और स्वाभिमानी थे।

मुस्तफा कमालपाशा में एक बड़ा भारी गुण यह था कि वे आलसी नहीं थे। हमेशा किसी-न-किसी काम में लगे ही रहते थे। वे पूरे कर्मयोगी थे। बिना थके रात दिन काम कर सकते थे। उन्हें नींद बहुत कम आती थी, मौका आने पर वे कई दिनों तक नहीं सोते थे। नींद उनकी दासी बनी हुई थी। वे गुड़ाकेश❀ कहे जा सकते थे। काम में जुट जाने पर भूख प्यास सब भूल जाते थे। जब असेम्बली में आप अपनी बात लोगों से मनवाना चाहते थे, तब रात को असेम्बली की बैठक की जाती थी। रात के १० बजे से सुबह के छः बजे तक बहसें होती रहतीं। सुबह होते-होते दूसरे मेम्बर्स थक जाते और घबरा उठते थे और वे ज्यों-के-त्यो तरोताजह रहते थे। लोग नींद और थकान से घबरा कर आपकी बातें मान लिया करते थे। सुबह होते ही दूसरे लोग अपना भारी मस्तिष्क लिए नींद में भरे हुए अपने अपने घर जाते और आप हाथ मुँह धोकर घोड़े पर चढ़ कर अपने खेत पर पहुँच जाते। मानो नींद से उठ कर हवाखोरी के लिए आए हो। वहाँ जाकर खेतों में काम करने लगते थे।

एक बार आप असेम्बली में व्याख्यान देने खड़े हुए तो छः दिन में जाकर कहीं व्याख्यान पूरा किया। इस व्याख्यान को आपने सात आठ रात जाग कर तय्यार किया था।

आपका चरित्रबल बहुत ऊँचा था। रूस की बोल्शेविक सरकार ने मुस्तफा कमालपाशा से दूसरे देशों में क्रान्ति कराने

❀ गुड़ाकेश। गुड़ाका + ईश = गुड़ाकेश। गुड़ाका = निद्रा, नींद। ईश = स्वामी, मालिक। अर्थात् नींद पर विजय पाने वाला व्यक्ति।

की सहायता माँगी। आपने जो जवाब दिया, वह आपके उच्च विचारों को प्रदर्शित करता है। आपने फर्माया—"न तो कोई अत्याचारी है और न कोई अत्याचार पीड़ित है। हाँ, एक प्रकार के लोग जरूर है जो दूसरों का अत्याचार चुपचाप सह लेते हैं। तुर्क इन लोगो में नहीं है, वे अपनी रक्षा स्वयं कर सकते हैं। दूसरे लोग अपनी रक्षा स्वयं करें।" कितना सुन्दर उत्तर है। यदि प्रत्येक मनुष्य इस सिद्धान्त का आचरण करे तो दुःख-दैन्य का नामोनिशान भी न रहे।

हम पीछे लिख आए है कि अरीफ नामक व्यक्ति मुस्तफा का एक मात्र विपदावस्था का सहायक मित्र था; परन्तु अब वह उनका मित्र नहीं था। पक्का विरोधी बन गया था। कमाल ने अपने विरोधियों को मिटा देना निश्चय कर लिया था। विरोधियो पर मुकदमा चला और उन्हे फाँसी की सजा दी गई। इन मे अरीफ भी था। जब फाँसी की सजा के कागज मुस्तफा कमालपाशा के पास पहुँचे, तब उन्होने अरीफ के कागज पर वैसे ही दस्तखत कर दिए जैसे दूसरों के कागजों पर किये थे। यह विचार उनके पास तक नहीं फटका कि अरीफ कभी मेरा मित्र रहा है।

कमाल के काम करने का ढंग यही रहा कि जो बात तय कर ली उसे फिर पूर्ण ही की। यूनानियों पर विजय पाकर एक दिन आपके मन में अपना विवाह करने की धुन सवार हुई। आपने किसी से भी कुछ न कहा न सुना। अपनी कार (मोटर) मँगवाई और 'लतीफा हलीमा' के पास पहुँचे। वहाँ पहुँच कर आपने छूटते ही कहा "हमलोग इसी वक्त शादी करेंगे।" वह

बेचारी उनका मुहँ देखने लगी। आपने फरमाया "जल्दी करो।" लतीफा ने कहा "जल्दी क्या है ? जरा देर ठहरिये।" आप कॉर लेकर चल दिए और थोड़ी देर बाद फिर आ गए। लतीफा को अपने साथ कार में बिठाया और चल पड़े। मार्ग में एक दाढ़ी वाला मौलवी मिला, उसे रोक कर कहा—"हमारा निकाह इसी जगह कर दो।" बेचारे मौलवी को झख मार कर वहीं निकाह कराना पड़ा। शादी होना दूसरे लोगों को तब मालूम हुआ जब कि आप अपनी दुल्हिन के साथ परेड देखने गये।

मुस्तफा कमालपाशा के धार्मिक विचार बड़े ही उत्कृष्ट थे। आप ईश्वर को नहीं मानते। उनका कहना था कि जब उसका अस्तित्व ही सिद्ध नहीं होता तो ईश्वर के झगड़ों में पड़ना बेवकूफी है। यह ईश्वर की कल्पना लोगो को पंगु बनाकर अपने चंगुल में फँसाए रहने के लिए है। उनके धर्म सम्बन्धी इतने स्पष्ट विचार थे कि भारत के मुसलमान तो शायद उन्हें कत्ल कर देते। वे धर्म को एक भयानक विष समझते थे। वे कहते थे कि इस धार्मिक विष ने जाति के शरीर को गला दिया है। आपकी राय थी कि—"अरब का धर्मशास्त्र, इस्लाम तो मर गया। यह जंगल में रहने वाली जंगली जातियों के लिए भले ही ठीक हो; किन्तु आजकल के उन्नतिशील राज्य के लिए वह किसी भी काम का नहीं है। जब खुदा ही नहीं तो खुदा का इलहाम कैसा ? जिस शासक को अपने शासन में मजहब की सहायता लेनी पड़े, वह कमजोर है। ऐसे कमजोरो को शासन करने का कुछ भी अधिकार नहीं है।"

एक दिन शेख-उल्-मुल्क साहब ने आपके आगे मजहब के

नाम पर कुछ सुधार सम्बन्धी बातों पर ऐतराज़ उठाया। यह मंत्रिमण्डल का सदस्य था और धर्माधिकारी भी। कमालपाशा को उसके इन दकियानूसी खयालातों पर बड़ा ही क्रोध आया। उन्होंने गुस्से से कुरानशरीफ की पुस्तक फेंक कर उसकी छाती में मारी और बेंत लेकर मारने दौड़े। मजहब के विरुद्ध ऐसे क्रान्तिकारी विचार होने के कारण उनके विरुद्ध कई बार क्रान्ति हुई; परन्तु वे तो अपने सिद्धान्तों से अच्युत थे। वे किसी भी काम को करने के पूर्व उसपर अच्छी तरह विचार करके उसका आदि अन्त सोच लेते थे। मन में निश्चय करने के बाद वे तूफान की तरह टूट पड़ते थे। आपमें गम्भीरता इतनी ज्यादः थी कि बिना अवसर आए अपने दिल की बात किसी पर भी नहीं प्रकट होते देते थे। बच्चों की तरह प्रस्ताव पास कराना और कागजी बहादुरी दिखा कर वाहवाही लूटना उन्हें पसन्द नहीं था। उन्हे तुर्कों में बहुत विश्वास था। उनका कहना था "मैं सब जातियों को जानता हूँ। मैंने उन्हे रणभूमि में परखा है—ऐसे समय देखा है, जब सब लोगों का चरित्र नग्न देखा जा सकता है। मैं दावे के साथ कहता हूँ कि हमारी जाति की आध्यात्मिक शक्ति दूसरी जातियों से चढ़ी बढ़ी है।"

सदाचार के सम्बन्ध में आपके विचार मनन करने योग्य थे। वे कहते थे "सदाचार तो एक टट्टी है, जिसकी ओट में धूर्त और पाखण्डी अपना शिकार खेला करते हैं। सदाचार के बहाने मूर्ख लोग अपनी मूर्खता छिपाए रहते हैं। आदर्श भी क्या है? मुहँ की धूल है।" सारांश यह कि मुस्तफा कमाल-पाशा सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक सभी बातों के सुधा-

रक थे, वे किसी के भरोसे या किसी के बल पर काम नहीं करना चाहते थे। वे अँधेरे में कूद पड़ने वाले व्यक्ति नहीं थे। वर्षों मनन के पश्चात् किसी कार्य को—ठीक जँचने पर जनता के लाभार्थ प्रयोग में लाने को उपस्थित करते थे। आप अपनी धुन के एक ही आदमी थे, संसार मे बहुत कम ऐसे आदमी मिलेंगे जो मुस्तफा कमालपाशा की समता कर सकें।

थोड़े ही दिन हुए टर्की, अफगानिस्तान, ईरान और ईराक ने यूरोप की बढ़ती हुई सामयिक शक्ति को देख कर मुस्लिम राष्ट्रों की रक्षा के लिए एक संगठन किया। 'मुस्लिम संघ' नामक संस्था स्थापित की। इस संघ ने मुस्तफा कमालपाशा को अपना प्रेसीडेण्ट चुना। संघ ने प्रत्येक मुस्लिम राष्ट्र की राजधानी को एक दूसरे से मिला देने के लिए, सड़क, रेल, तार और डाक की योजना की। मुस्लिम स्वत्वों की रक्षा के लिए संघ ने २० लाख सेना भी रखने का निश्चय किया।

मुस्तफा कमालपाशा यूरोप के लिए अगम्य थे। वे अकेले चानकाया नामक स्थान की सुन्दर फर्म में रहते थे। उन्होंने स्त्री को तलाक दे दिया था। वे इतने एकान्तवासी हो गए थे कि किसीको दिखाई भी नहीं देते थे। वे अपना नाम समाचार पत्रों में भी नहीं देखना चाहते थे। वे इन दिनों अपने सैनिकों के साथ 'पोकर' नामक खेल खेलते थे। प्रायः वे ही जीता करते थे। इन दिनों वे शराब अधिक लेते थे और इतनी लेते थे कि उससे स्वास्थ्य को हानि पहुँचने की सम्भावना रहती थी। उन्हें पुरानी बीमारी के दौरे भी कभी-कभी हो जाया करते थे। वे सुधारों के विचार-सागर में गोते खाते देखे जाते थे। वे

सुधारों के बड़े पक्षपाती थे। टर्की लिपि को अपने देश से बिलकुल मिटा देना चाहते थे। वे बहुत ज्याद: परिवर्त्तनवादी थे—यहाँ तक कि अपना नाम भी वे सात बार बदल चुके थे। अब वे—

कमाल आतातुर्क

कहलाते थे। कमाल ने अपने देश की भलाई में कुछ भी उठा नहीं रखा। टर्की का सद्भाग्य है कि उसे मुस्तफा कमालपाशा जैसा नर-रत्न डिक्टेटर मिला था। हमारी हार्दिक कामना है कि जो राष्ट्र अवनतावस्था में हैं उन्हें मुस्तफा कमालपाशा जैसे नेता शीघ्र ही प्राप्त हों।

१९

आजकल

अब टर्की यूरोप की छाती पर एक प्रबल शक्ति बन गया है। इस समय वह यूरोप की ही क्या सारे भूमण्डल की पहेली बन गया है। भूमण्डल पर युद्ध का ज्वालामुखी फटने वाला है। प्रत्येक देश में भीतर-ही-भीतर आग धधक रही है। सभी रणोन्मत्त दिखाई दे रहे हैं; फिर भी वे टर्की के सम्बन्ध में सोचा करते हैं कि वह क्या करेगा? किस ओर होगा? युद्ध में भाग लेगा या नहीं? इत्यादि। टर्की के स्वतंत्र दीप को बुझने से बचाने वाले मुस्तफा कमाल की दूरदर्शिता, राजनीतिज्ञता और बुद्धिमत्ता से सारा यूरोप जर्मन-युद्ध के समय से ही भलीभाँति परिचित है और उसके बाद तो उसकी शक्ति आज दिन-दूनी

रात-चौगुनी बढ़ी है। अब टर्की का प्रत्येक बच्चा सैनिक है। वह अपने सेनापति के इशारे पर अपनी मातृ-भूमि के चरण पङ्कज को अपने उष्ण रक्त से प्रक्षालन करने को तय्यार है। आज भी दूसरे मुस्लिम राष्ट्र मुस्तफा कमाल के प्रति अपनी श्रद्धा रखते हैं, उसने सभी यूरोप एवं एशिया स्थित मुस्लिम राष्ट्रों को एक सूत्र में बाँध दिया था। कमाल को सभी अपना पथ-प्रदर्शक, अनुभवी बीर सेनापति मानते थे। उसकी हुंकार सुन कर शत-शत सहस्र-सहस्र योद्धा अपनी स्वतन्त्रता की भेंट में अपने शीश-सुमन मातृभूमि पर चढ़ाने को समुद्यत थे। वैसे तो बच्चा-बच्चा तक समय पड़ने पर मैदानेजंग में अपने हाथ दिखाने को तय्यार हैं; किन्तु कमालपाशा के संकेत पर शत्रु के रक्त से तर्पण करने वाली २५ लाख शिक्षित सेना तय्यार थी, उसके पास इस युग के सभी यान्त्रिक साधन मौजूद थे। मशीनगनें, हवाई जहाज, पानी के जहाज, गैस, तोपें, आर्मर्डकार, टैंक वग़ैरः सभी कुछ था। टर्की अब यूरोप के लिए हौआ हो गया है। जिसे यूरोप कभी "बुड्ढा टर्की" अथवा "यूरोप का रोगी" कह कर मज़ाक उड़ाया करता था, वही टर्की अब, कमालपाशा जैसे वीर नेता को पाकर कट-खना, खूँखार शेर बन गया है। एक दिन जो इसका बँटवारा कर रहे थे, या यों कहिए कि आपस में बाँट चुके थे, वही, ग्रीस, इंगलैण्ड, फ्रान्स प्रभृति इसकी गुर्राहट और घोर गर्जना से घबराते हैं।

वे सुलतान साहब जो कभी टर्की ही क्या सारे मुस्लिम संसार के धार्मिक नेता 'खलीफा' होते थे, आज दक्षिण फ्रांस में

समुद्र के किनारे अपनी जिन्दगी के दिन काट रहे हैं। उनके कुटुम्बी और प्रियजन दूसरे लोगों के बरतन माँज कर और भीख माँग-माँग कर पेट भरते हैं। टर्की से खिलाफत तोड़ दी गई। धर्म-विभाग नष्ट कर दिया। राष्ट्र निर्माण के लिए पार्लमेण्टरी डिक्टेटरशिप स्थापित कर दी गई। कहते हैं टर्की के सुलतान अब्दुल हमीद का हरम बड़ा विशाल था। औलाद भी रावण की तरह थीं। आज उसकी औलादें टिड्डी दल की तरह फ्रांस में समुद्र के किनारे छा रही हैं। अब्दुल हमीद मर गया। वह इतनी अतुल धन राशि छोड़ गया है, कि उसका बँटवारा ही अब कठिन हो रहा है। यह धन के बँटवारे का प्रश्न फ्रांस के निवासियो को खेल बन गया है। इन सुलतान खान्दान के लोगों को लड़ाने के लिए वहाँ कम्पनियाँ खड़ी हो गई हैं, जो उन्हे आपस में लड़ाकर खूब पैसा लूट रही हैं और वकीलों को तो पूछिए ही नहीं, पाँचो घी में हैं। वे मिलनेवाली सम्पत्ति में अपना हिस्सा लिखवा कर मुफ्त पैरवी कर रहे हैं। टर्की का अन्तिम सुलतान और इस्लाम का खलीफा मोहम्मद आजकल वरनीज ओवरलैण्ड मे अपने जीवन के शेष दिन पूरे कर रहा है। एक बार, कहते हैं, एक अंग्रेज सुलतान से मिलने आया। उसे एक तंग कोठरी में ले जाया गया। वहाँ एक बूढ़ा व्यक्ति अपने मोजे अँगीठी की गर्मी से सुखा रहा था। उससे उस आगन्तुक अंग्रेज ने पूछा—"मै टर्की के भूतपूर्व सुलतान से मुलाकात चाहता हूँ, वे कहाँ हैं?" बूढ़े ने एक लम्बी ठण्डी साँस ली और कहा—"मैं ही वह अभागा टर्की का सुलतान हूँ, जिससे आप मिलना चाहते हैं।" यह बात हमे बता रही है कि टर्की के सुलतान की क्या

दशा है ? न वह शान है न शौकत है । न वह हरम है न ऐशो-आराम है। अब उस अभागे सुलतान के पास ५०० रूप-लावण्य भरी सुन्दरियाँ नहीं हैं। एक फ्रेंच लेडी ही उसकी संगिनी है। जिस समय इन्हें टर्की छोड़कर जाना पड़ा, उस समय इनके पास ५९५० पौंड मूल्य के जवाहरात थे। इनके सामान से लदी हुई सैंकड़ों लारियाँ इनके साथ गई थीं। परन्तु समय-चक्र में फँस कर वे आज इस दशा को पहुँच गए हैं।

टर्की की वर्तमान सरकार ने सुलतान अब्दुल हमीद की जो कुछ सम्पत्ति टर्की में थी, सब जब्त कर ली। उसका कहना है कि खलीफा अब्दुल हमीद ने, अपनी भोली भाली प्रजा के पसीने की कमाई को अन्याय एवं अत्याचार पूर्वक अपहरण करके अपना कोष भरा था, इसलिए आज उसपर टर्कों का अधिकार है। कमाल-पाशा ने इस रकम को शिक्षा में व्यय करने की आज्ञा दी है। अब्दुल हमीद वेवकूफ नहीं था। वह दूसरे राजाओं की भाँति चालाक और होशियार था। उसे हमेशा अपने अत्याचार और अन्याय के कारण भय बना रहता था कि न जाने कब गद्दी छोड़नी पड़े। उसने इंग्लैण्ड, हॉलैण्ड और स्विट्जरलैण्ड के बैंकों में अपने नाम से करोड़ों रुपए जमा करा दिए थे; परन्तु आज बैंक भी रुपया देने में आनाकानी कर रहे हैं—क्योंकि एकदम इतना अर्थात् पन्द्रह बीस करोड़ रुपयों का कौन भुग-तान करे? सारांश कि टर्की के सुलतान और उसके शाहजादों की बुरी हालत है। करोड़ों रुपया बैंकों में जमा है, परन्तु दाने दाने के लिए तरस रहे हैं। अपने खलीफा की इस दयनीय दशा पर भारत के मुसलमानों का दिल भले ही दुखित हो; किन्तु टर्की

के लोग बहुत ही खुश हैं। आज कमालपाशा की सरकार कैसी धर्म-विरोधी—नास्तिक बन रही है कि न वह अपने खलीफा धर्माचार्य की दशा पर दया करती है और न उसके बाल-बच्चों पर ही रहम लाती है! काश आज कमालपाशा भारत में होवे तो ऐसे बिगड़े (!!!) मुसलमान को यहाँ के सच्चे (!!!) मुसलमान पत्थर मार-मार कर जान ले लेते (!!!); परन्तु कमालपाशा ने धर्म के तत्वों को समझ लिया था और वह धर्म के ढोंगों के विरुद्ध बागी बन गया था। वह पुरातनवादी नहीं था। वह युग-धर्म का उपासक था। यदि आज वह भी हमारे भारतीय मुसलमान भाइयों की भाँति कूँडापन्थी बन कर १४०० वर्ष पुराने अरब के धर्म को ठीक उसी पुरातन रूप में अपनाए रहने की जिद करता तो आज इस जमाने में टर्की का नामोनिशान न रहता और यदि नाम भी होता तो उसके साथ 'गुलाम' शब्द जरूर लगा होता। वह धर्म कदापि धर्म नहीं, जिसके द्वारा परतन्त्रता की बेड़ियाँ पड़ती हों। वह धर्म कदापि धर्म नहीं कहा जा सकता, जिसके द्वारा राष्ट्र और उसके अधिवासियों की अवनति हो। मुस्तफा कमाल ने अच्छी तरह समझ लिया था कि 'धर्म' नामक वस्तु एक ढोंग है, जो मनुष्य को, जाति को और राष्ट्र को नष्ट करनेवाली है। भारत के मुसलमान अन्य देशों के मुसलमानों की अपेक्षा अपने को जरा विशेष धार्मिक और खुदापरस्त मानते हैं। यही कारण है कि यहाँ आए दिन हिन्दू-मुसलमानों के झगड़े हो जाते हैं। भारत के हिज हाइनेस आगाखाँ और अमीर-अली को कमालपाशा के इस धर्म-विरोध पर बहुत ही तरस आया। इन्होंने तुर्किस्तान से जाते हुए इस्लाम मजहब की रक्षा

के निमित्त टर्की के तीन समाचारपत्रों मे अपनी चिट्ठियाँ छप-वाई; जिनमें कमालपाशा की सरकार के धर्म-विरोधी कामों की खूब निन्दा की गई। कमालपाशा ने तीनों पत्रों के सम्पादकों को जेलखाने की हवा खिला दी और प्रेस तथा पत्र जब्त कर लिए। इसका प्रभाव कमालपाशा के हृदय पर और भी बुरा हुआ। उसने पुराने विचारो के धर्म-भीरु मुल्लाओं को मार डाला, जो धार्मिक अड़ंगा खड़ा करके लोगों को भड़का रहे थे। तमाम मजहवी स्कूल बन्द कर दिए। शेख और दरवेशों की समस्त उपाधियाँ गैरकानूनी घोषित कर दीं। सुलतानों के मकबरों की पूजा वगैर: बन्द कर दो। रोजा रखने की मनाही कर दी। जमीन पर लेट-लेट कर—माथा टेक-टेक कर नमाज पढ़ने की मुमानियत करा दी गई। अनेक धार्मिक-कृत्यों को और उत्सवों को बन्द कर दिया। शुक्रवार के बजाय रविवार-छुट्टी का हुक्म दिया। टर्की भाषा अरबी लिपि में न लिखकर लैटिन में लिखने का हुक्म जारी किया। इसका घोर विरोध हुआ। मर्दों की अपेक्षा स्त्रियाँ अधिक विरुद्ध हो गईं। उन्होंने अपनी कन्याओं को स्कूल कॉलेज जाने से रोक लिया। कमालपाशा ने अपने सुधार के मार्ग में नए रोड़े आड़े आए देखकर बड़ी ही नीतिमत्ता से काम लिया। उसने एक सरकारी फर्मान निकाल कर इस विरोध का दमन किया। उसने घोषित किया कि—

"सब टर्किस मर्द और औरतों को लैटिन लिपि सीखनी पड़ेगी; किन्तु जो व्यक्ति ४२ वर्ष से अधिक उम्र के हैं, वे चाहें तो न भी सीखें।"

इसका परिणाम बड़ा ही सुन्दर निकला। बूढ़े मर्द और

औरतें तक भी स्कूल और कालेजों में लैटिन लिपि सीखने जाने लगे।

खलीफा अब्दुल हमीद के कुटुम्बियों की इस समय फ्रांस में जो दुर्दशा है वह वर्णनातीत, दुःखपूर्ण है। किसी-किसी को तो पूरी तरह भर पेट भोजन भी मुअस्सिर नहीं हो रहा है। वे लोग विविध प्रकार के रोजगार-धन्धे करते हैं। सड़कों पर गाने गा-गाकर भीख माँगते हैं। जो खूबसूरत स्त्रियाँ हैं, उन्हें भीख अच्छी मिल जाती है। कई लोग नाचघरों में और शराबघरों मे बाजा बजाने का काम करते हैं। कुछ होटलों में जूठे बरतन साफ करके अपना पेट भरते हैं। कुछ चोरी छाने कोकेन और अफीम बेच कर गुजर चलाते हैं। राजकुमार फारूकवा का मामला जरा पढ़ने लायक है। फारूकवा खलीफा मशीद पाँचवे के पुत्र थे। आप एक काठ के घर में रहते थे। जब तक पास मे पैसा रहा, नवाबी और शाही ठाठ से अदूरदर्शी बनकर पैसा उड़ाया; परन्तु जब पैसा नहीं रहा, तब सारी शानोशौकत काफूर हो गई। खाने को पास में कुछ नहीं। न तो खाना पका सकते थे और न होटलों मे जा सकते थे। मौत का दृश्य देखने लगे। एक बार घर में आग लगी, सोचा कि जल जावेंगे, झगड़ा मिटेगा; परन्तु दमकल ने आकर आग बुझा दी। बेचारे के तमाम हर्ष पर पानी फिर गया। अन्त में बेचारे ने भूखों प्राण त्याग दिए। वह वसीयतनामे में लिख गया कि मेरी लाश किसी मुसलमानी राज्य को भेज दी जावे; परन्तु लाश वहीं पड़ी रही। अनाथों के लिए जो 'नीस' में कब्रिस्तान है उसमें फारूकवा साहब पृथ्वी में सो रहे हैं।

यहीं नीस में मोहम्मद रसीद पाँचवें की एक विधवा स्त्री भी रहती है। साथ में एक बेटा और दो पोते भी हैं। वे किस तरह अपने दिन काट रहे हैं, यह देखकर वज्र-हृदय भी पिघल जाता है। इन शाहजादों के पास पहनने तक को कपड़े नहीं हैं। अतएव ये तीनों एक साथ बाहर कभी नहीं निकलते। एक ही भीख माँगने बाहर जाता है, वह भी फटे वस्त्र पहिन कर! यह है नियति का विषम चक्र!!! समय का फेर तो देखिए, जो सुलतान अब्दुल अरमीनियनों को 'ईसाई कुत्ते' कहा करता था, आज उसीकी एक पोती ने एक अरमीनियन ईसाई का हाथ पकड़ा है, वह भी पेट की ज्वाला शान्त करने के लिए!!

आज से लगभग १०-१२ वर्ष पूर्व मुस्तफा कमालपाशा ने प्रिंस अब्दुल्लाह कादिर को टर्की से निकाल दिया था। वह अपने साथ अतुल धन-राशि ले गया। उसके पास दो सुन्दर पत्नी भी निर्वासित हुईं। कुछ बदमाशों ने मिलकर पहले तो उसका सब धन हथिया लिया और फिर एक बीबी कोई हंगेरियन व्यापारी उड़ा ले गया। वह नर्तकी बन कर वहाँ से लौटी। प्रिंस ने एक बाजे वाले के यहाँ नौकरी करके अपना उदर-पोषण करना आरम्भ किया। कुछ दिनों के बाद वह हंगेरियन व्यापारी आया और उसने उसकी बीबी लौटाते हुए अपने कुसूर की मुआफी माँगी। प्रिंस ने क्षमा कर दिया; परन्तु वह धूर्त अब उसकी दूसरी बीबी ले भागा। यह बीबी आजकल बुडापेस्ट के एक प्रसिद्ध नाइट क्लब की परम सुन्दरी हूर बनी हुई है। क्लब का मालिक उसे तुर्की की बेगम प्रिंसेज अब्दुल कादिर के नाम से

मशहूर करके खूब धन बटोर रहा है। यह देख कर सहसा मुँह से निकल पड़ता है—

"हुआ समय का फेर, हाय, पलटी परिपाटी।
जो थे कभी सुमेरु, आज हैं केवल माटी।"

× × ×

मुस्तफा कमालपाशा अपने देश को यूरोप के किसी देश से एक तिल भर भी पीछे नहीं रखना चाहता था। वहाँ की सरकार देश से दरिद्रता दूर करने की चिन्ता में है। उसका कहना है कि जबतक एक भी भूखा इस देश में है तब तक राजनीतिक स्वतंत्रता सदैव खतरे में है। उसने देश से बेकारी भगाने का कार्यक्रम तयार किया और उसके द्वारा सब कुछ कर दिखाया। सन् १९३४ तक टर्की का कच्चा माल हमारे भारत की ही तरह यूरोप और विशेषतः रूस जाता था। अब एक दम कच्चे माल का बाहर जाना रोक दिया गया। परिणाम यह हुआ कि आजकल बाहर से टर्की में कच्चा माल आने लगा है। दो साल पहले टर्की में बहुत ही अच्छा रेशम तयार होता था, परन्तु बनता था हाथ से। अतएव वह महँगा पड़ता था और धनी लोग ही उसे खरीद कर काम में ला सकते थे; परन्तु आज टर्की में रेशम के पाँच बड़े-बड़े कारखाने चल रहे हैं, जिनमें बहुत सस्ता रेशम तयार होता है। इन कारखानों से साल में ५० लाख रुपयों का माल तयार होता है। नकली रेशम के पाँच कारखाने अलग हैं, जो जापान के नकली रेशम को नीचा दिखा रहे हैं। ये कारखाने अपने देश की आवश्यकता पूरी करके बाहर भी रेशम भेजते हैं।

सन् १९३४ तक टर्की में एक ही कागज बनाने का कारखाना था। इस समय दो कारखाने कागज बना रहे हैं। विदेशी कागज पर भारी आयात कर लगा दिया है। कमालपाशा ने हुक्म निकाल रक्खा था कि सरकारी दफ्तरों में देशी कागज काम में लाया जाय। पुस्तक-प्रकाशक भी देशी कागज ही काम में लाते हैं। यद्यपि बाहर से भी विदेशी कागज आता है, तथापि बहुत कम। बाहर से कागज आने का कारण यह है कि तुर्कों का साहित्य-प्रेम उत्तरोत्तर बढ़ रहा है, अतएव पुस्तक-प्रकाशन का कार्य जोरों पर है। समाचार-पत्रों के पढ़ने का शौक भी काफी है। इसी पर से देखा जा सकता है कि टर्की की एक करोड़ छब्बीस लाख जन संख्या मे 'मिलियत' और 'जम्हूरियत' नामक पत्रों की ग्राहक संख्या ६० सत्तर हजार के लगभग है। अभी दस बारह साल पहले जिस टर्की की बुरी दशा थी, उसके लिए यह कम गौरव अथवा आश्चर्य की बात नहीं है। इन कारखानों में टर्किश नवयुवक काम सीख रहे हैं, जिससे शीघ्र ही देश के उद्योग-धन्धों की उन्नति हो सके। अभी इन कारखानों मे नारवेजियन और एशियन इंजीनियर काम करते हैं।

टर्की में सेल्यूलाइड का एक बड़ा भारी कारखाना खुल गया है। यहाँ टर्की के कच्चे माल से ही सेल्यूलाइड तैयार किया जाता है। इससे पहले प्रति वर्ष तीन चार लाख रुपयों का सेल्यूलाइड वहाँ विदेशों से आता था—अब बन्द हो गया है। स्तम्बोल में काँच का एक बड़ा भारी कारखाना चल रहा है। कुताहाया में चीनी मिट्टी का कारखाना है। यूरोप की सभ्यता के कारण टर्की में चीनी के पात्रों का विशेष उपयोग किया जाता है।

पहले चीनी के बरतन यूरोप से आते थे। अब बाहर से आना वन्द हो गया है। एक केमिकल कारखाना भी खोला गया है। जिसमें तेजाब सोडा आदि विविध रासायनिक द्रव्य बनते हैं। शीघ्र ही टर्की की सरकार एक रंग का कारखाना खोलने जा रही है। वह अपने देश के व्यापारियों को कारखाने स्थापित करने के लिए प्रोत्साहित करती रहती है। प्रति वर्ष दो सौ टर्किश विद्यार्थी यूरोप में जाकर उद्योग-धन्धों की शिक्षा प्राप्त करते हैं। टर्की-सरकार इन विद्यार्थियों को रुपए कर्ज लेकर भी विदेश शिक्षा पाने को भेजती है। क्यों न हो? जहाँ के शासक अपने बालकों को इस प्रकार शिक्षा दिलाने में कटिबद्ध हों, वह राष्ट्र उन्नत क्यों न हो? इतना ही नहीं, अँगोरा के विश्वविद्यालय में संसार के प्रसिद्ध और नामी-नामी अध्यापक नियुक्त हैं। इस समय उक्त विद्यालय में ५० के लगभग विदेशी अध्यापक हैं और सभी अपने विषय के पारङ्गत हैं। कमालपाशा की इस बुद्धिमत्ता से टर्की शीघ्र ही स्वीडन, नारवे और हॉलैण्ड की तरह औद्योगिक क्षेत्र में बाजी मार ले जावेगा।

कमालपाशा विद्या प्रचार के पक्के हामी थे। अभी थोड़े ही दिनों की बात है कि टर्की के गर्ल्स-स्कूलों के अध्यापकों ने लड़कियों के अभिभावकों को सावधान किया कि—वे अपनी लड़कियों को सड़कों में खड़े रह कर नवयुवकों से बातचीत न करने दें। ऊँची एड़ी का जूता, क्रीम, पाउडर आदि न लगाने दें और बिना किसी रिश्तेदार को साथ लिए सिनेमा न जाने दें। जब यह बात कमालपाशा को विदित हुई तो उसने फौरन ही उन अध्यापकों को नौकरी से बरखास्त कर दिया, जिन्होंने यह

आज्ञा निकाली थी। टर्की-सरकार लड़कियों के स्वत्वों का अपहरण नहीं करना चाहती, वह उन्हें पुरुषों की भाँति पूर्ण स्वतंत्र देखना चाहती है।

अभी हाल में ही कमालपाशा ने अँगोरा में एक नए विश्वविद्यालय की स्थापना की थी। जिसका उद्देश्य है—साहित्य भूगोल और इतिहास के द्वारा, टर्की के डिक्टेटर के विचारों से परिचय प्राप्त कराना। इस विश्वविद्यालय में टर्की की नई सभ्यता और संस्कृति का भी ज्ञान कराया जायगा। कमालपाशा को इस तरह उन्नति की ओर अग्रसर होता देख कर यूरोप और एशिया के समस्त राष्ट्र आश्चर्यचकित और सशंक हैं। टर्की का पड़ोसी रूस तक टर्की से भयभीत और सतर्क रहने लगा है।

आज टर्की अपने पुरातन को नमस्कार कर चुका है। वह यूरोप के राष्ट्रों के साथ बिलकुल कदम मिलाए बढ़ रहा है। परन्तु अभी भी वहाँ इस नवीनता के विरोधियों का अभाव नहीं है। वे हैं, किन्तु निर्बल हो गए हैं। कमालपाशा के व्यक्तित्व ने समस्त राष्ट्र के हृदय को जीत लिया है। टर्की अभी उन्नति की ओर बढ़ता ही जा रहा है अतएव उसके भविष्य का अनुमान लगाना कठिन है। हम हृदय से टर्की का अभ्युदय चाहते हैं।

जीवन-यवनिका

वैसे तो कमाल ने देश की सेवा बचपन ही से की, किन्तु वह यूरोप महायुद्ध के अन्तिम दिनों में टर्की-राष्ट्र के क्षितिज पर एक तेजपुञ्ज नक्षत्र के रूप में स्पष्ट दिखाई पड़ा। उसने अपने जीवन के ४६ वें वर्ष में टर्की का पुनर्निर्माण आरम्भ किया था। उसने टर्की में नया जीवन और नई जिन्दगी फूँक दी। एक कवि ने उसके सम्बन्ध मे कहा है:—

"When the Ghazi was Commander
 and The nation in arms,
We snatched victory from the enemy,
So, when the Ghazi is master
 and the nation pupil,
Ignorance shall be chased from field.

अर्थात्—"गाजी जब सेनानायक और देश सशस्त्र था, तो हमने शत्रुओं को परास्त किया और जब कि आज गाजी गुरु और देश शिष्य है, तो मूर्खता भी मैदान से भगा दी जायगी।" यह कविता अक्षरशः सत्य हुई। यदि टर्की में कमाल जैसा प्रभावशाली, दूरदर्शी, दृढ़-निश्चयी, फौलादी व्यक्ति नेता के रूप मे पैदा न हुआ होता तो टर्की का अस्तित्व अक्षुण्ण बना रहता! इसमें सन्देह था। वह जिन्दादिल व्यक्ति था। टर्की का ही शेर नहीं, बल्कि यूरोप में अपनी दहाड़ से हड़कम्प उपस्थित कर देनेवाला नर-केसरी था। उसने अपने देश की नब्ज को देख कर उसे संजीवनी बूटी द्वारा पुनर्जीवित किया। यूरोप के अन्य राष्ट्र जिस टर्की के लिए "Sickman of Europe" अर्थात् "यूरोप का रोगी" कहते थे। वही रोगी कमाल की संजीवनी पाकर नीरोग ही नहीं, बल्कि हट्टा-कट्टा और मजबूत बन गया। कमाल ने अपने देश का कायाकल्प कर दिया। एक शताब्दि से जर्जरीभूत जीवन में अमृत सींचकर उसे चंगा कर दिया। वह टर्की के लिए देवता और शत्रु देशों के लिए दानव सिद्ध हुआ। भाग्य से ही टर्की को वह नेता प्राप्त हुआ था। उसने राष्ट्र के शरीरस्थ कोढ़—खिलाफत, निरक्षरता, मुल्लापन, धर्मान्धता, प्राचीन रूढ़ियाँ, साम्प्रदायिकता, पर्दा, पुराणवादिता आदि को सुधारवाद का मरहम लगा-लगा कर हमेशा के लिए नष्ट कर दिया। आज टर्की का शरीर नीरुज है।

कमाल के इन सद्गुणों पर मुग्ध होकर टर्की की "ग्राण्ड नेशनल असेम्बली" ने उसे 'अतातुर्क' की उपाधि से विभू-

षित किया। यह पद कमाल के लिए सर्वथा उपयुक्त था। असेम्बली के एक प्रसिद्ध सदस्य ने ठीक कहा था:—

"Turkey has only one word to express her love for her illustrious chief, that is 'Ataturk' in to this name flow all her tenderness her gratitude and her respect,"

अर्थात्—अपने महान् नेता के प्रति प्रेमपूर्ण शब्द 'अतातुर्क' से बढ़कर टर्की के पास दूसरा है ही नहीं। इसमें उसका स्नेह, कृतज्ञता और सम्मान निहित है। 'तुर्कों का पिता'—अतातुर्क। सचमुच इससे बढ़कर दूसरी उपाधि क्या हो सकती है ? हमारे देश में जिस प्रकार अपने महापुरुष गान्धीजी के प्रति अपना स्नेह, आदर और कृतज्ञता प्रकट करने के लिए 'महात्मा' और 'बापू' शब्द प्रयुक्त हैं, उसी तरह कमाल के प्रति टर्की ने 'अतातुर्क' शब्द प्रयोग कर अपने कर्त्तव्य का पालन किया था।

अपने जीवन भर टर्की में अनन्त सुधार और क्रान्तिकारी परिवर्तन करनेवाला वह फौलादी, शेरेदिल व्यक्ति अक्तूबर १९३८ के अन्तिम सप्ताह में बीमार हुआ। किसी को भी आशा नहीं थी कि इस बीमारी से वह नर-शार्दूल उठेगा ही नही। सन् १९१७ में जब कि कमाल एक प्रधान सैनिक अफसर के रूप में काम कर रहे थे, बीमार पड़े। बीमारी खतरनाक थी। युद्ध-क्षेत्र से हटा कर इलाज के लिये कार्ल्सवाद भेजा गया। एक प्रसिद्ध आस्ट्रियन डाक्टर ने उस मरीज को देखकर कहा— "तुम शराब पीना छोड़ दो, वर्ना एक वर्ष में मर जाओगे।" कमाल ऐसी बातों की कब पर्वाह करने लगा। उसने डाक्टर

को उपेक्षा की दृष्टि से देखा। उसके आगे तो युद्धक्षेत्र का दृश्य था। वह रोग को भूल गया और अस्पताल छोड़ कर अंग्रेजी सेना से लोहा लेने मैदाने-जंग में पहुँचा। शराब पीते रहने पर भी कमाल जिंदा ही रहा और वे डाक्टर साहब एक साल के भीतर ही दुनियाँ से टिकट कटा गए। यह कमाल की दृढ़ इच्छाशक्ति का फल था। इस बार भी बीमारी की दशा में स्वयं कमाल साहब को यह खयाल नहीं था कि उनके जीवन का कार्यकाल अब समाप्त होना चाहता है। बीमारी के आरम्भिक दिनों में उन्होंने कहा था—"अभी मैं नहीं मरूँगा। मुझे अभी टर्की में बहुत कुछ करना है।" किन्तु रोग धीरे-धीरे भयङ्कर होता गया। नवम्बर के प्रथम सप्ताह के अन्त तक रोग बढ़ा और घटा। आशा की जाने लगी कि राष्ट्र-पिता कमाल बच जावेंगे। तुर्कों के मुरझाये मुँह पर आनन्द की रेखा दीख पड़ने लगी; परन्तु दूसरे सप्ताह ही तार द्वारा सूचना मिलने लगी कि "Death expected at any moment" अर्थात मृत्यु चाहे जब हो सकती है। किसे मालूम था कि बुझते दीपक में जैसे एक अन्तिम प्रकाश होकर वह बुझ जाता है, उसी तरह हमारे चरित्र-नायक का जीवन-दीप निर्वाण हो जायगा। ता० १० नवम्बर १९३८ के प्रातःकाल वह नर-पुंगव इस लोक से महाप्रयाण कर गया।

अतातुर्क का निधन सम्वाद बिजली की भाँति तत्काल सारे भूमण्डल पर फैल गया। टर्की के आबाल-वृद्ध नरनारी फूट-फूट कर रोने लगे। सारा तुर्किस्तान शोक महार्णव में निमग्न हो गया। जिस स्वतंत्रता के उपासक ने कमाल के

शरीरान्त का समाचार सुना, वह वहीं हाय करके सन्न रह गया। भारतवासियों ने इस दुखद सम्वाद को बड़े दुःख के साथ सुना। अपने सर्वस्व, राष्ट्र-देवता के मृत्यु-समाचार को सुनते ही इस्तंबोल के डोलमाबैच राजभवन के नीचे शोकातुर तुर्क इकट्ठे होकर फूट-फूट कर रोए।

अतीत काल के गेरीबाल्डी, नेपोलियन, विस्मार्क, वर्त्तमान युग के लेनिन, मुसोलिनी, हिटलर से कमाल अतातुर्क का स्थान ऊँचा है। जिन विषम परिस्थितियों में होकर कमाल को गुजरना पड़ा, उनमें गेरीबाल्डी, विस्मार्क और नेपोलियन को नहीं गुजरना पड़ा था। गेरीबाल्डी को केवल आस्ट्रिया से युद्ध करना पड़ा था। विस्मार्क को अपने देश-विस्तार के लिए फ्रांस और आस्ट्रिया से युद्ध करना पड़ा था। नेपोलियन ने तो १–२ युद्ध छोड़ कर व्यर्थ ही दिग्विजय पिपासा शान्त करने के लिए पृथ्वी को रक्त-रंजित किया था; परन्तु कमाल को तो अपने राष्ट्र को मृत्यु के दंष्ट्र से बचाने के लिये एक साथ अंग्रेज, फ्रांसीसी और इटालियनों से टक्कर लेनी पड़ी थी। परिस्थिति बेढब थी। सामने बीसवीं सदी के चालाक और उन्नत यूरोपियन राष्ट्र थे और इधर अकेला निर्बल टर्की— यूरोपियन राजनीतिज्ञों के शब्दों में मृत, क्षत-विक्षत, निर्धन टर्की था। परन्तु विजयी हुआ कमाल, देश की आजादी का दीवाना कमाल—राष्ट्र का प्राण कमाल!

आज वह कमाल इस दुनिया में नहीं है। बीमार टर्की को चंगा भला बना देने वाला वह पीयूषमणि धन्वन्तरि नहीं है। टर्की को सभ्य, सुशिक्षित, शक्तिशाली और स्वाभिमानी राष्ट्र बनाकर

यूरोपियन राष्ट्रों के बीच खड़ा कर देनेवाला वह दुर्द्धर्ष राजनीतिक-योद्धा नहीं है; परन्तु कमाल अमर है। उसका नश्वर-पार्थिव-शरीर वसुन्धरा के गर्भ मे सदा के लिए गहरी नींद से सुखनिद्रा में सो रहा है, किन्तु वह आज हमारे बीच जीवित है। कमाल के शब्दों में ही सुनिये—

"× × × × सच पूछो तो कमाल एक नहीं, कमाल तो दो हैं। एक तो आपके सामने हाड़-मांस का पुतला है। यह एक-न-एक दिन दुनिया से अलविदा कह जायगा। दूसरा कमाल अमर है। उसके सम्बन्ध में मैं कुछ नहीं कह सकता। उसचे सच्चे प्रतिनिधि वे हैं जो देश के कोने-कोने में जाकर कमाल के नाम से नवजीवन की ज्योति जगाते हैं।"

आज कमाल अतातुर्क मर कर भी जीवित है। जब तक टर्की का नाम इस भूमण्डल पर है, तब तक वह इसके साथ जीवित है। वह अपने पीछे अपनी और सन्तान नहीं छोड़ गया। जब वह सारे टर्की का पिता ही माना जा चुका था, तो सारे देशवासी उसीकी सन्तान हैं। वह अपने पीछे एक नहीं, दो नहीं; लाखों, करोड़ों औलादें छोड़ गया है। अरबों रिश्तेदार जो भूमण्डल के कोने-कोने में उसके चिर-वियोग से दुखी हो आँसू बहा रहे हैं।

पराधीन भारत ने उस स्वतंत्रता की प्रतिमूर्ति के महा-प्रयाण का संवाद बड़े दुःख से सुना। ता० १९ नवम्बर को राष्ट्र-पति श्री सुभासचन्द्र बोस ने 'कमाल-दिवस' मनाने की सूचना प्रकाशित की। तदनुसार उस दिन भारत में अतातुर्क के प्रति श्रद्धाञ्जलि समर्पित की गई। असेम्बली ने भी सहानुभूति में

ता० १४ नवम्बर को अपना कार्य स्थगित कर दिया। कमाल सच्चा वीर था, वीराग्रणी था। वीर पूजा के नाते भारत का कर्त्तव्य था, कि वह उसके प्रति अपना आदर और सम्मान प्रकट करता।

आज इस संसार से कमाल उठ गया। एक बड़ा आदमी जो लगभग बीस वर्षों से अपने कार्यों द्वारा संसार को चकित कर रहा था—जिससे हाथ मिलाने में विश्व के बड़े-बड़े राष्ट्र अपना सौभाग्य मानते थे, वह अमरशान्ति के क्रोड़ में गहरी नींद में सो गया। आज तक मनुष्य से मृत्यु ही अधिक बलवती सिद्ध हुई है—वह आज भी सिद्ध हुई। टर्की उसकी जन्मभूमि थी। वह उसे अपनी माता समझता था। माता का अपमान उससे नहीं सहा जाता था। उसने अपनी माता के कठिन बन्धनों को खोला, उसे मुक्त किया और उसके चरणों पर सिर टेका। माता ने हृदय से लगाया और आशीर्वाद दिया "बेटा, अमर रहो।"

ओ, परतन्त्र देश की तरुण-शक्ति! कमाल के जीवन को देखो, उसके कामों को आँखें खोलकर अच्छी तरह देखो और यदि तुम्हें अपनी मातृभूमि का ध्यान है—उसे परतन्त्रता की कठिन जंजीरों से मुक्त करने का ज्ञान है, तो फिर खड़े हो हो जाओ। कमाल का यह जीवन-चरित्र तुम्हारे मार्ग का प्रकाशस्तंभ बन कर मंजिले मकसूद तक पहुँचाने मे सहायक होगा।

अतातुर्क के पार्थिव शरीर को एक लाख तुर्कों ने रोते-रोते माँ वसुन्धरा के सुपुर्द कर दिया। रोते-रोते सैकड़ों लोग बेहोश

हो गए। भीड़ में ११-१२ व्यक्ति कुचल कर अपने पिता के साथ ही इस लोक से विदा हो गए। टर्की प्रजातंत्र की लाट के आगे इस्तंबोल युनिवर्सिटी के तीस हजार छात्रों ने उस महापुरुष के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट की और प्रजातंत्र के प्रति कृतज्ञता की शपथ ली। छात्राओं ने विशेष कृतज्ञता और श्रद्धा प्रकट करते हुए कहा—"अतातुर्क ने स्त्रियों का अनन्त हित किया है।" श्रद्धा प्रदर्शनान्तर छात्रों ने अपने सफेद कालर फाड़ डाले ताकि सारी पोशाक पूरी तरह काली मालूम हो।

यदि ईश्वर नाम की कोई शक्ति इस विश्व में है और आत्मा के आवागमन की बात सत्य है तो हमारी यह कामना है कि कमाल की आत्मा हमारे देश भारत में अवतरित हो।

एवमस्तु!

२१
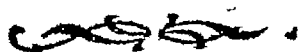
भारत के नेताओं द्वारा कमाल की मृत्यु पर दिए गये सन्देश

"इस मृत्यु से तुर्की की महान क्षति हुई है। तुर्कों के प्रति मैं अपनी सहानुभूति प्रकट करता हूँ। इस संकट से निकल कर वे सुखपूर्वक रहें, यही मेरी कामना है।"

—महात्मा गान्धी

"कमालपाशा केवल युद्ध-भूमि में ही नहीं, वरन् राष्ट्र-निर्माण में भी क्रान्तिकारी थे। आप इस बात के उदाहरण थे कि जो स्वतंत्रता के युद्ध में विजयी होते हैं, उन्हे राष्ट्र निर्माण का काम भी करना चाहिए।

यूरोपीय महायुद्ध मे जो प्रमुख व्यक्ति प्रकट हुए, उनमें कमालपाशा सर्वश्रेष्ठ थे। उनका अकस्मात् प्रसिद्धि प्राप्त कर

लेना इतिहास में एक विचित्र बात है। कमाल एक विजयी वीर अथवा आदर्श होने के अतिरिक्त और भी बहुत कुछ थे। वे एक अत्यन्त चतुर राजनीतिज्ञ थे। वास्तव में अपने जीवन में ऐसी अनोखी सफलता, वे अपने हृदय और मस्तिष्क के बहुमुखी गुणों के कारण ही प्राप्त कर सके। एक जनरल, राजनीतिज्ञ, समाज-सुधारक, योद्धा और राष्ट्र-निर्माता की हैसियत से वे इस शताब्दि के एक महान् व्यक्ति थे।"

—सुभाषचन्द्र बोस
(राष्ट्रपति १६३८)

"कमाल अतातुर्क तुर्की के लिए मसीहा बनकर आये थे। सदियों के दासत्व जीवन से उन्होंने तुर्की को मुक्त किया है। उनके फौलादी व्यक्तित्व एवं आदर्श नेतृत्व ने स्वेच्छातन्त्र और अनाचार के पुराने शासन में आबाध वीर तुर्क सिपाहियों में आश्चर्य-जनक साहस का सञ्चार कर दिया है। यद्यपि वे इस समय पार्थिव शरीर में तुर्की से अलग हो गये हैं, किन्तु उनका आदर्श सशरीर तुर्की में व्याप्त है और चिरकाल तक व्याप्त रहेगा।"

—श्रीसरोजिनी नायडू

"कमाल स्वतन्त्रता का एक सच्चा प्रेमी था, यद्यपि वह बाद में एक डिक्टेटर हो गया था। निस्सन्देह वह एक डिक्टेटर था। उसकी डिक्टेटरी तुर्की की प्रगति को खिलाफत, मौलवियों और अत्याचारियों से मुक्त कराने के लिये थी। तुर्की आज स्वतंत्र है। भगवान करें कि संसार के सबसे अधिक महान आत्मा की प्रेरणा द्वारा तुर्की जाति की स्वतन्त्रता दिन-प्रति-दिन और शक्तिशाली हो। परमात्मा करें कि उसकी आत्मा को शान्ति

प्राप्त हो। जब मैं ये कह रहा हूँ, तब मेरा मतलब इससे अधिक होता है, चूंकि उसकी आत्मा महान और साहसी थी, संसार के सामने यह एक उदाहरण है, विशेषकर उनके लिये जो लोग कि जीवन को संकुचित दृष्टि से देखते हैं।"

—श्री भूलाभाई देसाई

"मौजूदा इस्लामी दुनियाँ में वे एक बहुत बड़े मुसलमान थे। मेरा विश्वास है कि समस्त मुस्लिम संसार आपके शोक में शोकातुर होगा। वे वर्तमान तुर्की के निर्माता और पूर्वी देशों के मुस्लिम राज्यों के सामने आदर्श स्वरूप थे। अनेक विघ्न-बाधाओं के बीच में पड़कर उन्होंने अपने देश का उद्धार किया है। संसार के इतिहास में वे अप्रतिभ हैं।'

मि० जिन्ना

"कमाल अतातुर्क के देहावसान से हम लोगों पर भीषण आघात लगा है। संसार का एक सम्भ्रान्त व्यक्ति उठ गया है। इस क्षति से समस्त सभ्य संसार निर्धन हो गया है।"

—मि० फजलुलहक
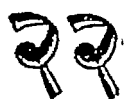
उत्तराधिकार

अतातुर्क अपने युग का प्रसिद्ध डिक्टेटर था। परन्तु अन्य डिक्टेटरों की तरह उसका रहन सहन नहीं था। High thinking & plain living उसके जीवन का मोटो था "उच्च विचार और सादा जीवन।" यद्यपि लगातार वह चार बार वोटों से १९२३, २७, ३१ और १९३६ में अपने देश का राष्ट्रपति चुना गया, तथापि उसके पास अभिमान छू तक नहीं गया था। सादा रहन-सहन, सादा भोजन और सादा मिजाज था। वह सभी से मिलता था। सभी उससे बातचीत कर सकते थे। वह अकेला सड़कों पर घूमता-फिरता था। टर्की के बहुत से किसान उससे मिलने आया करते थे, क्योंकि वह स्वयं भी एक

किसान था। अँगोरा में उसने अपना खेती का कारोबार शुरू कर रखा था। वह कभी-कभी हल भी चलाता था। खेती पर ही अपना गुजर-बशर करता था। वहीं उसने अपना पुस्तकालय भी रखा था। आज उसमें लगभग २० हजार पुस्तकें हैं। खेती के काम से निबट कर वह पुस्तकें पढ़ा करता था। पुस्तकें पढ़ने का उसे व्यसन था। अपनी कीर्ति से वह दूर था। यहाँ तक कि पत्र-पत्रिकाओं को अपना फोटो तक छापने को उसने मना कर रखा था। वह खेती के काम-काज से थककर मनोरंजनार्थ ग्रामोफोन बजाता था। उसने अपने लिए टर्की के पुराने गीतों के रिकार्ड बनवाए थे।

यद्यपि कमाल अपने पीछे कोई सन्तान नहीं छोड़ गया है तथापि वह अपनी कमाई हुई एक अच्छी सम्पत्ति देश को दे गया है। अन्त समय के कुछ दिनों पहले ही उसने सारी जायदाद देश के अर्पण कर दी थी। ता०२९ नवम्बर को सरकारी तौर पर, अँगोरा में कमाल की विल (वसीयतनामा) को खोला गया। वह अपने पीछे १० लाख पौण्ड अर्थात लगभग सवा करोड़ रुपए छोड़ गया है। यह सम्पत्ति टर्की के विद्यार्थियो के काम आवेगी।

उनके स्थान पर उनके विश्वस्त साथी जनरल इस्मत इन्येनू टर्की के राष्ट्रपति हुए हैं। ये दो बार प्रेसीडेण्ट रह चुके हैं। टर्की के मंत्रिमण्डल में थोड़ा सा हेरफेर हुआ है। आशा ही नहीं बल्कि भरोसा है कि कमाल के उत्तराधिकारी अपने राष्ट्र को अतातुर्क के वियोग का दुःखस्मरण करने का अवसर न आने देंगे।

परिशिष्ट

टर्की का कायापलट

कृषि तथा कल-कारखानों की उन्नति

(लेखक—डाक्टर प्रकाशचन्द्र एम. ए., पी-एच. डी.)

उन मुल्कों में जिन्होंने हाल में बहुत तरक्की की है। टर्की का नाम भी शामिल है। एक जमाना वह था कि टर्की यूरोप का 'बीमार आदमी' कहलाता था। जो मुल्क चाहता, इस पर हमला करता और कुछ हिस्सा जीतकर अपने में शामिल कर लेता। किसी से मुकाबला करने का दम टर्की में न था। पुराने रस्म और रिवाज, बहुत हद तक, उन्नति न होने के कारण थे। टर्की की कमजोरी यूरोप के महायुद्ध में बिलकुल जाहिर हो गई। पुरानी सल्तनत खत्म हो गई और कमालपाशा ने टर्की सभ्यता की नये सिरे से बुनियाद डाली। नतीजा यह हुआ कि पुरानी और मौजूदा टर्की में जमीन और आसमान का

फर्क है। अक्सर मुसाफिरों का कहना है कि नई टर्की इस कदर पुरानी टर्की से भिन्न है कि उसका पहचानना मुश्किल है। पहले टर्की में बहुत कम कारखाने थे। अक्सर चीजें बाहर ही से मँगाई जाती थीं और इसलिए कि गैर मुल्कों के सौदागर अपनी चीजें खुशी से भेजें, चुंगी भी नहीं ली जाती थी। टर्की में सिर्फ ग्रीस और अरमेनियाँ के निवासी ही सौदागरी का काम करते थे। तुर्क लोग खुद किसान होते थे या सिपाही या अन्य सरकारी नौकरी करते थे। जब लड़ाई के बाद टर्की ने यह इरादा कर लिया कि वह अपनी चीजें आप बनाये, तो यह जरूरी हुआ कि सरकार तरह-तरह के कारखाने खोल दे। लिहाजा आज-कल जगह-जगह फेक्ट्रियाँ पाई जाती हैं। फेक्ट्रियों में हवा और रोशनी का काफी खयाल रखा गया है और आजकल के सब आराम मौजूद हैं और मजदूरी भी काफी है। मजदूरों के लिए फेक्ट्री ही के पास रहने का इन्तजाम है। उनके लिये अच्छे क्वार्टर बनाये गये हैं, जहाँ वे अपने परिवार के साथ बखूबी रह सकें।

शुरू से फेक्ट्रियों का चलाना कोई आसान काम न था। ठीक किस्म के मजदूर ही न मिलते थे। भला टर्की के किसानों को, जो आजाद तबियत के हैं, फेक्ट्रियों की पाबंदियाँ कब पसन्द आने लगीं? इसके अतिरिक्त वे लग कर काम करना नहीं चाहते थे। कुछ दिन काम किया और घर की राह ली। जो कुछ पैसा कमा लिया, उसे खतम किया और फिर किसी और तरफ निकल पड़े। इसलिये हर मौसम मे फेक्ट्रियों को नये और नातजुर्बेकार मजदूर मिलते थे। ये लोग नासमझ होते थे और अक्सर आपस

में लड़ते थे। लेकिन अब बहुत कुछ सुधार हो गया है। इनकी तालीम का माकूल इन्तजाम है। क्लब भी खोल दिये गये हैं और को-ऑपरेटिव सोसायटीज़ भी।

मर्दों के अलावा औरतें भी फैक्ट्रियों में काम करती हैं। लड़कियाँ अक्सर बाहरी खेलों में लड़कों का साथ देती हैं। इनके पढ़ने-लिखने का भी इन्तजाम है। लड़कों और लड़कियों की तन्दुरुस्ती का भी अच्छा ध्यान रखा जाता है और एक डाक्टर मुकर्रर होता है, जिसका काम इनकी दवा-दारू करना है। औरतें सिर्फ कारखानों में ही नहीं बल्कि हर जगह पाई जाती हैं। उनमें से कुछ जज हैं, कुछ वकील, कुछ डाक्टर और कुछ शिक्षक भी। मर्दों और औरतों को एक ही तनख्वाह दी जाती है। बाज बातों में तो औरतों ने मर्दों को नीचा दिखाया है और यह बात मर्दों को पसन्द नहीं।

फैक्ट्रियों में इंजीनियर भी काम करते हैं। उनमें से कुछ तो परदेशी हैं, जैसे जर्मन और रूसी, लेकिन बाज तुर्क भी हैं, जिन्होंने बाहरी मुल्कों में शिक्षा पाई है। अक्सर बड़े-बड़े कारखाने कम उम्र डायरेक्टरों के नीचे हैं, जिसकी वजह यह है कि मुकर्रर करने के वक्त सिर्फ काबलीयत ही देखी जाती है। यह भी सच है कि युवकों में काम करने की ताकत वृद्ध पुरुषों की निस्बत ज्यादा होती है।

टर्की को कारखानों में दिलचस्पी लिये हुए तो थोड़ा ही जमाना गुजरा है, लेकिन यह हमेशा से एक फौजी कौम रही है। हरएक को कुछ दिनों फौज में रहना अनिवार्य बना दिया गया है। चाहे कोई शख्स कितना ही जोरदार हो, फौज में भर्ती होने

से नहीं बच सकता। जब नये रंगरूट भर्ती होते हैं तो इनकी कैफियत अजब होती है। अक्सर ये लोग फौज में डरते-डरते भर्ती होते हैं और केवल गोबर-गनेस ही नजर आते हैं; लेकिन कुछ ही दिनों में इन्हें सफाई पसन्द आने लगती है। समय का ज्ञान हो जाता है। हुक्म को मानने की आदत पड़ जाती है। पढ़ना लिखना सीख जाते हैं और गोली चलाना भी। लेकिन इन बातों के अलावा उनको आजकल की मशीनों का चलाना और नये तर्ज से खेती करना भी सिखाया जाता है, ताकि जब वे दो बरस के बाद फौज से वापिस जायँ तो अपनी रोटी आप कमा सकें।

किसानो की दशा में भी अच्छा परिवर्तन हुआ है। सरकार ने हर एक किसान को काफी तायदाद में जमीन दे रखी है, जिससे वह अपना गुजारा अच्छी तरह कर सके। असल में जमीन के विषय में कोई दिक्कत भी नहीं; क्योंकि बहुत सी ऐसी जमीन है, जो बेकार पड़ी हुई है। अक्सर सरकार ने जमीन किसानों को दी है, सिर्फ इस शर्त्त पर कि वे तीन वर्ष में उसको जोत डालें। कृषि के नये वैज्ञानिक साधनों का भी उपयोग हो रहा है। कहीं-कहीं ट्रेक्टर्स दिखाई देते हैं और घोड़े हल चलाते हैं। सरकार अच्छे बीजों को तकसीम करती है और अच्छे साँड़ों, गधों वगैरह को नस्लकशी के लिये देती है। कृषि-सम्बन्धी पाठशालाएँ जगह-जगह खोल दी गई हैं और माडेल फार्म भी।

इस तरह से हरेक क्षेत्र में टर्की तरक्की कर रहा है और इसका अधिक श्रेय कमालपाशा को है।

टर्की के प्राण 'कमाल'

(लेखक—श्री लक्ष्मीचन्द्र वाजपेयी 'चन्द्र')

प्रत्येक पिछड़े हुए राष्ट्र को उन्नति की पराकाष्ठा तक ले जाने के लिये किसी-न-किसी महान आत्मा की शरण लेना अनिवार्य होता है। उसकी सर्वतोमुखी प्रतिभा और क्षमता के बल पर प्रत्येक राष्ट्र विकसित हो सकता है। वह कायरों के हृदयों में उन्नति की अग्नि धधका सकता है, वह देश अथवा राष्ट्र को संगठन की मजबूत डोर से बाँध सकता है। उसके शब्द पर समस्त देश बलिदान होने को तत्पर हो सकता है। वह शान्ति की सुमधुर संगीत-लहरी प्रतिध्वनित कर सकता है। वह प्रलयङ्कर महायुद्ध के लिये भैरव शंखनाद फूँक सकता है। उसकी क्षमता दिग-दिगन्त में व्याप्त हो सकती है। वह स्वतन्त्रता देवी को अपने अधिकार में रख सकता है। किसी परतन्त्र, परशासित देश को स्वतन्त्र एवं धन-धान्यपूर्ण बनाने की उसमें अलौकिक क्षमता

विद्यमान रहती है। इसी सिद्धान्त को 'टर्की' के साथ पूर्णरूपेण चरितार्थ होते हुए देखते हैं। वर्तमान 'टर्की' मुस्तफा कमाल-पाशा के संचालन सूत्र में है। वह जो कुछ भी कहता है, सर्व-मान्य होता है। वर्तमान 'टर्की' की उन्नति का समस्त श्रेय केवल उसी सैनिक कमाल को है, यह कहना अत्युक्ति न होगी। जब तक 'टर्की' सुलतान के अधिकार में था, तब तक उसे उन्नति करने का सौभाग्य न प्राप्त हो सका। अनन्त अनादि-काल से वह पुरानी रूढ़ियों को अपनाता चला आ रहा था। उसे अपनी जीर्ण-शीर्ण परिस्थिति का किंचित मात्र भी ज्ञान न था। अपनी प्रयोजन पूर्ति कैसे की जाती है, यह वह जानता ही न था। शासकों के कठोरतम दण्डों का स्वागत कर, वह अपने को गौरवान्वित समझता था। पर समय ने पलटा खाया। 'टर्की' को 'कमाल' जैसा अदम्य साहसी सैनिक प्राप्त हो गया। आज 'टर्की' पर दृष्टिविपर्यय कीजिये, आपको स्पष्ट विदित हो जायगा कि 'टर्की' ने आशातीत उन्नति कर ली है और उसकी भी गणना उन्नतिशील राष्ट्रों में की जा सकती है।

'कमालपाशा' ने सैकड़ों लाभदायक नियम निकाले हैं। उसने प्राचीन रूढ़ियों को समाधि में दफना दिया है। उसके इस परिवर्तन पर समस्त विश्व आश्चर्यान्वित है। 'कमालपाशा' का यह नियम कि राष्ट्रीय एवं राजनैतिक कार्यों से धर्म का प्रश्न उठा लिया जाय, सबसे महत्वपूर्ण है। यह ध्रुव सत्य है, जब तक कथित विषयों से धर्म का कुचक्र नहीं हटेगा, तब तक उन्नति करना दुस्तर ही है। भाषा और लिपि के परिवर्तन के साथ-ही-साथ वहाँ के निवासियों की पोशाक-पहिनाव में भी

अधिक परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। उन लोगों ने तुर्की टोपियों को जला दिया है और उसकी पूर्ति सामरिक टोपों द्वारा की है। दिन और तारीख आदि देखने के लिये जंत्री के स्थान पर वे लोग कैलेण्डर अपनाने लगे हैं। सबसे विचित्र बात तो यह है कि 'टर्की' में शुक्रवार को सार्वजनिक छुट्टी दी जाती थी, पर 'कमाल' की बुद्धिमत्ता से वह अब इतवार को रक्खी गई है। इसमें कुछ धर्म का वितण्डावाद खड़ा हुआ था, पर 'कमाल' ने उसे बड़ी कुशलतापूर्वक दबा दिया। प्रत्येक संस्था मे 'सह-शित्ता' के नियम का अनुसरण किया जा रहा है। युवक युवतियाँ साथ ही खेलती और अध्ययन करती हैं। खुले मैदान मे वायुसेवन के लिये निःसंकोच जाती हैं। थियेटर और बाइ-स्कोपो की भी प्रचुरता है। प्रत्येक संस्था व्यायाम के नियम पर कठिन अनुशासन रखती है।

निःसन्देह, महासमर के बाद से 'टर्की' पतन के गहन-गर्त में गिरता जा रहा था और यदि 'कमाल' सा वीर न मिलता, तो सम्भव था कि वह अब तक अनन्त सागर में निमज्जित हो गया होता। पर 'टर्की' की स्वाधीनता की रत्ता के निमित्त उसने अविराम परिश्रम कर लोगों को चकित कर दिया। वह 'टर्की' को यूरोप के सिरमौर राष्ट्रों के समकत्त बनाने की सतत् चेष्टा कर रहा है। वह अपने व्यक्तित्व की तर्कना शक्ति से प्राचीन रूढ़ियों की थोथी पीलों को ध्वस्त-विध्वस्त कर रहा है और हर्ष का विषय है, अपने राष्ट्र के उस त्राणकर्त्ता को 'टर्की' निवासियों ने प्रोत्साहित भी किया।

तुर्किस्तान का पुनर्जीवन

(ले०—एक यात्री)

कमालपाशा ने तुर्किस्तान की किस प्रकार कायापलट कर दी है, इसका ठीक अनुमान बिना वहाँ गये नहीं लगता। तुर्किस्तान की पूर्व पिछड़ी हालत और वर्तमान अद्भुत स्थिति देख कर यही कहना पड़ता है कि कमालपाशा की सफलता अद्वितीय है। रशिया की क्रान्ति को २० वर्ष बीत चुके तथापि वहाँ अभी भी ऐसी बातें नजर पड़ ही जाती हैं; जो उसके विषय में आदर में बाधा डालती है, परंतु कमालपाशा की क्रान्ति एकदम शान्तिपूर्ण, त्वराशील और श्लाघ्य है। कुछ वर्ष पूर्व तुर्किस्तान एक अत्यन्त पिछड़ा हुआ प्रदेश था। वहाँ का राजनैतिक और आर्थिक जीवन एकदम निकृष्ट था। देश में किसी प्रकार की जागृति, संगठन या जिज्ञासा का अभाव था।

घोर धर्मान्धता

वहाँ धर्मान्धता तो इतनी गहरी थी कि उसकी समता अन्यत्र मिलना कठिन है। अनेक प्रकार के धार्मिक अन्धविश्वास वहाँ छाये हुए थे, परन्तु कमालपाशा ने व्यक्ति की धार्मिक स्वतंत्रता बनाये रखकर भी धर्म के प्रभाव व धार्मिक दृष्टिकोण में दूसरा ही मंत्र फूँक दिया। इससे मालूम यह होता है, मानों कमाल ने पुराना धर्म उखाड़ कर कोई नया धर्म संस्थापित किया हो।

आज तुर्किस्तान में सर्वत्र कमालवाद की चर्चा है, यह केवल राजनैतिक और सामाजिक पुनरुत्थान का प्रणेता ही नहीं और न केवल जीवन का नया दृष्टिकोण है। यह इससे बहुत अधिक अर्थ रखता है। आज तुर्किस्तान में कमालवाद का अर्थ है चहुमुखी प्रगति—शिक्षा, राजनीति, अर्थ, बुद्धि, विवेक और जीवन के दृष्टिकोण—सबके विषय में अतृप्त प्रगति की सदा ज्वलन्त बनी रहने वाली भावना। संसार में मनुष्य के स्थान, कार्य करने की भावना और अपने भविष्य की कल्पना, आप इन सभी बातों के विषय में वहाँ एक नई भावना और नई आशा पायेंगे।

तानाशाही नहीं

इस प्रगति का परिचय प्राप्त करते समय यह ध्यान रखने लायक बात है कि यह तानाशाही नहीं है। यह सत्य है कि इस सारी प्रगति का सूत्रधार कमालपाशा है—तुर्किस्तान का वर्तमान भौगोलिक, राजनैतिक और सामाजिक स्वरूप उसीकी देन है—वहाँ कोई बात बिना उसकी पसन्दगी के नहीं हो सकती, परन्तु

यदि कोई गैर जानकार विदेशी उसे तानाशाह के नाम से पुकारता है, तो वह इसे सहन करने में बड़ी कठिनाई अनुभव करता है। वहाँ की धारा-सभा जर्मन और इटालियन धारा-सभाओं की भाँति वर्ष में केवल दो-एक बार अपने तानाशाह की नीति का केवल समर्थन करने के लिये ही नहीं जुड़ती, अपितु वहाँ पार्लामेंट नियमित रूप से प्रतिदिन बैठती है और उसे वाद-विवाद व मत-प्रदर्शन की पूर्ण स्वतंत्रता है। कमाल की इससे भी अधिक प्रजातंत्र-भावना का परिचय मिलता है, उसके निजी व्यवहार से। वह आसानी से कोई न पहुँच सके, ऐसे किसी स्थान में बैठ कर कोई गुप्त मंत्रणा नहीं करता, अपितु अपने निवास स्थान में सुबह से रात तक अपने मित्रों, मंत्रियों व अन्य लोगों के साथ राज-काज विषयक सलाह किया करता है। वह नियोजित योजनाओं के विषय में प्रत्येक पहलू पर उनसे विचार-विनिमय किया करता है। इसी प्रकार, वह अक्सर छोटे-छोटे ग्रामों व नगरों में किसी खेत, घर या पाठशाला आदि में जा पहुँचता है और वहाँ के लोगों से उनकी शिकायतें उनके मुख से सुनकर शासन पर प्रत्यक्ष निगरानी रखता और जनता की भलाई के लिये सदैव प्रयत्नशील रहता है। उसका कोई कानून बिना विशद चर्चा और विचार-विनिमय तथा पार्लमेंट की स्वीकृति के नहीं बनता। मैं जब वहाँ के गृहमंत्री से मिलने गया, तो वार्तालाप के सिलसिले में उसने कहा कि—"मैं गत १४ वर्ष से एक-न-एक विभाग का मंत्री रहता आया हूँ, पर इस काल में कभी कमालपाशा ने पूर्व सलाह और मंत्रणा किए बिना कोई हुक्म नहीं दिया। उसने मेरे वहैसियत मंत्री के किसी कार्य में

कभी हस्तक्षेप नहीं किया। यदि आप अन्य किसी मंत्री से पूछेंगे तो अपने विभाग के विषय में वह भी यही कहेगा।"

क्रियात्मक धर्म

मेरे विचार में जो सबसे प्रमुख कार्य कमालपाशा ने किया है वह मूढ़ भावना को मिटाकर क्रियात्मक धर्म की भावना का उद्रेक है। उसने तुर्कों की जीवन-विषयक अनेक हीनताओं को मिटाकर उन्हे सजग, कर्त्तव्यशील नागरिक बना दिया है—उनमें स्वार्थहीनता और जन-सेवा की भावना पैदा की है। वहाँ की जनता पहिले भाग्य-वादी थी। (यह मुस्लिम धर्म और तुर्किस्तान का खास स्वरूप था) कोई बीमारी, अनुपज या ऐसी किसी बात में बिना उद्योग किये लोग भाग्य के भरोसे बैठ जाया करते थे। "इन्शाल्लाह" यही उनका जीवन था, परन्तु कमालपाशा ने यह थोथी भावना मिटा कर तुर्कों में पुरुषार्थ की वृत्ति पैदा की है। कमालपाशा ने अपने महल के पास ही एक बड़ा कृषि-क्षेत्र बना रखा है, जिनमें कृषि-विषय के विविध बातों का हजारों लोग आकर परिचय प्राप्त करते हैं। यहाँ कृषक देखता है कि किस प्रकार ज्ञान, परिश्रम एवं उद्योग से मनुष्य सूखे खेत को लहलहाते उद्यान में परिणत कर सकता है और किस प्रकार प्रकृति की गुलामी की अपेक्षा उसपर स्वामित्व प्राप्त कर सकता है। इसे देखकर जनता के हृदय में स्वाभाविकतः ही ईश्वर, मनुष्य व कार्य के विषय में एक नई धारणा का उदय होता है। मुझे स्वयं को यदि तुर्किस्तान में सबसे अधिक प्रभाव डालने वाली बात मालूम हुई, तो यही।

कमालपाशा व्यक्तिगत धार्मिक स्वतंत्रता में कभी बाधा नहीं

डालता, जैसा कि रशिया, जर्मनी आदि में होता है। तुर्की फौज का सेनापति एक अंध श्रद्धालु मुसलमान है। कमालपाशा उसको काफी खिझाया करता है; परन्तु उसके इस पद से उक्त बात की सत्यता समझी जा सकती है। कमालपाशा ने किया यही है कि धर्म का अनावश्यक वह रूप घटा दिया है, जहाँ वह व्यक्ति की उन्नति में बाधा डालता था और उसे आध्यात्मिक दायरे तक सीमित कर दिया है। वहाँ धर्म-गुरु मस्जिदों के क्रिया-कर्मों में ही आधिपत्य रखते हैं। शिक्षा, व्यवसाय, कानून आदि में उनका कोई असर नहीं रहा।

तुर्कों की इस समय धार्मिक प्रवृत्ति क्या है, इसका अभी ठीक अन्दाज नहीं लगता। मुझे युवकों ने कहा कि धर्म का ढकोसला तो अब बड़े-बूढ़ों के लिये ही रह गया है; परन्तु मैंने देखा कि मस्जिदों में अभी भी छोटे-बड़ों की काफी उपस्थिति रहती है। तथापि यह सत्य है कि वहाँ धर्म का जो पहिले प्रभाव था, वह बहुत कुछ नष्ट हो गया है।

राष्ट्रीयता

कमालपाशा ने तुर्कों में राष्ट्रीयता का खूब प्रचार किया है। यह राष्ट्रीयता अभी तक तो निर्दोष है, परन्तु आगे भी ऐसी ही बनी रहेगी और यूरोपियन राष्ट्रों के समान दूसरों के लिए भय का कारण न बनेगी यह अभी नहीं कहा जा सकता। परन्तु मुझे विश्वास है कि वह पाश्चात्य ढंग का घातक स्वरूप धारण न करेगी।

मुस्तफा कमालपाशा

(लेखक—श्री शिवनारायण टण्डन)

साधारण जनता नियमित और संगठित शासन चाहती है। वह अनाचार और अत्याचार से ऊब चुकी है। वह उद्दण्ड शासकों की माया से पर्याप्त पीड़ित हो चुकी है। हाँ, वह शासन की कठोरता अब भी मानने को तैयार है। जनता अपने शासक को बलवान, शक्तिमान, गुणवान और प्रजापालक देखने की भूखी रहती है। बादशाहों और शाहंशाहों का युग चला गया, क्योंकि उनमें इन गुणों का सर्वथा अभाव था।

"पाँव थर्राते थे जिनके सामने जाते हुये।
काश वे सर उनके देखे ठोकरें खाते हुए॥"

वे नेस्तनाबूद हो गये, पर जनता अब भी बादशाहत की सी हुकूमत पसन्द करती है। वह चाहती है कि हमारी और हमारे देश की भलाई करने वाला, हमों में से कोई भाई

का लाल उस तख्ते-ताऊस पर बैठ कर देश की लाज रक्खे, बशर्ते कि वह स्वार्थी न हो, निरंकुश न हो, अत्याचारी न हो और अन्याय के मार्ग मे कदम बढ़ाते समय उसे जन-बल का भय रहता हो। फिर वह चाहे जितनी शक्ति अपने में केन्द्रीभूत कर ले। जनता वालों की इसकी जरा भर परवाह नहीं है। उसे वे अपना सखा कहेंगे। सम्बन्धी कहेंगे, भ्राता कहेंगे और उसकी कठोर-से-कठोर आज्ञाओं का पालन मनसा-वाचा-कर्मणा से करेंगे। यह वर्तमान शासित संसार की प्रवृत्ति है। साधारण जनता शासन करना नहीं जानती, पर वह शासक की निगाह परखना खूब जानती है। जनता ने इस बात को सदियों के तजुर्बे से देख लिया है कि राजा और महाराजा कहलाने वाले बहुधा स्वेच्छाचारी होते हैं। प्रजा ने इस राज को समझ कर राजतंत्र शासन से मुँह मोड़ लिया और अपने ही आदमियों को प्रजातन्त्र के नाम पर ऊपर उठा कर गद्दीनशी कर दिया। इन पुरुष सिंहों ने प्रजा के दिये हुए अधिकारों को निबाहा, उनका दुरुपयोग नहीं होने दिया। अतएव प्रजावर्ग का इन पर दिनोदिन विश्वास जमता गया। ऐसे ही एक प्रजा के सच्चे सेवक, गाजी कमालपाशा के बारे में पाठकों को कुछ सुनाऊँगा।

मैं एक बार कमालपाशा से मिला था। वे अपने को तुर्की प्रजातन्त्र का एक साधारण नागरिक कहते हैं। मैंने नेपोलियन, अलेक्जेंडर और गैरीबाल्डी से उनकी तुलना करते हुए कहा कि आप तो इस युग के महापुरुषों में से एक हैं। देशभक्त आपको श्रद्धा और भक्ति की दृष्टि से देखते हैं। यदि आप देश विदेशों की यात्रा करें, तो लाखों आदमियों की

पंक्तियाँ आपके दर्शनों के लिए खड़ी रहें और यदि आप भारतवर्ष पधारें, तो वहाँ के पुरुष आपकी पूजा करें। इसके उत्तर मे उन्होंने जो कुछ कहा, वह आज भी कानों में घुँघरू की तरह बज रहा है। वे बोले "मेरी इतनी प्रशंसा, चापलूसी और तारीफ काहे को करते हो। ऐसे-ऐसे ऐतिहासिक महान् पुरुषों से मुझसे खादिम की तुलना क्यों करते हो। मेरा नाम सिर्फ मुस्तफा कमाल है। हाँ यदि मेरा आदर ही किया चाहते हो तो मुझे टर्की का मुस्तफा कमाल कह लो।' मुस्तफा कमाल के स्वदेश भाई उनकी इज्जत मे उन्हे गाज़ी—विजयी—मुस्तफा कमालपाशा कहते हैं। इसके अलावा कोई भी सम्मान, कोई भी विशेषण कमाल बर्दाश्त करने वाले नहीं हैं। जिस तरह भारतीय महात्माजी की इज्जत करते हैं, ठीक उसी तरह टर्की वाले कमालपाशा को अपना सर्वस्व समझते हैं।

कमालपाशा अपने तौर-तरीकों और व्यवहार में पाश्चात्य सभ्यता के कायल हैं। वे समय के बड़े पाबन्द हैं। खेतों की बुवाई-जुताई में वे मोटर का उपयोग अपने हाथों करते हैं। कालर, नेकटाई, पैंट, खुले गले का कोट, बूट-जूते और हैट उनको पोशाक में शामिल हैं। पाश्चात्य वेश-भूषा को उनके कारण तुर्की भर ने अपना लिया है। यहाँ तक कि महिलायें और बालिकायें भी ऊँची एँड़ी का जूता और फ्राक पहने; मुँह खोले, कुस्तुनतुनियाँ की सड़कों पर चीजें खरीदते नजर आती हैं। कमाल के कहने से प्राचीनता-प्रिय टर्की वालों ने, सब कुछ किया है। परदे को बिदा कर दिया है। यहाँ तक कि टर्की भाषा को लिपि तक भी बदल कर रोमन अक्षरों मे कर दी गई

है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि इतना बड़ा परिवर्तन इतने कम समय में, किसी एक आदमी ने आज तक नहीं कर पाया। जिन सामाजिक सुधारों को कार्यरूप में परिणत करने के कारण बादशाह अमानुल्ला को अफगानिस्तान ने न केवल गद्दी पर से ही हटा दिया, प्रत्युत देश से भी निर्वासित कर दिया। उन्हीं सुधारों को कमालपाशा ने चुटकी बजाते प्रचलित कर दिखाया।

टर्की की स्त्रियाँ—

पिछले दस वर्ष पहिले टर्की की स्त्रियों की दशा क्या थी और अब क्या हो गयी है। इसके लिये कट्टर-से-कट्टर लोगों को भी कमालपाशा के कमाल को दाद देनी पड़ेगी।

आज से दस वर्ष पूर्व, सुलतान और खलीफा के शासन-काल में टर्की की स्त्रियों की दशा दयनीय थी। शिक्षा का नाम वे न जानती थीं। सामाजिक जीवन में उनका कोई मूल्य न था, मानवी अधिकारों से वे वञ्चित थीं और पशुओं का सा उनके साथ व्यवहार होता था। स्त्रियां ७ वर्ष की अवस्था से लेकर कब्र में दफनायी जाने के समय तक घर की दीवारों के अतिरिक्त न जी भर किसी वस्तु को देख सकती थीं और न संसार में किसी को अपना मुँह दिखा सकती थीं। १४ वर्ष की अवस्था तक पिता-गृह में बन्द रहना और उसके बाद पति-गृह में जाकर पर्दे की बूबू बनकर सड़ना ही उनका जीवन था। स्त्रियाँ यदि घर के बाहर निकलतीं भी, तो सर से नाखून तक लम्बे लबादे से बड़ी होशियारी से ढकी निकलतीं और गाड़ियों पर ट्रामों में, नावों पर जहाँ भी बैठतीं,

उनके लिए चारों ओर से बन्द स्थान अलग बना होता और वे उसमें रख दी जातीं। १६ वर्ष की अवस्था में लड़कियों का विवाह होता था और वह ऐसे पुरुष के साथ जिसकी शक्ल तक कभी उन्होंने देखी न हो। उनका पति उन्हें जब चाहता, एक क्षण के अन्दर उनका परित्याग कर सकता था। केवल उसे दो व्यक्तियों के सामने यह कहना पड़ता था कि हमें अब इसकी आवश्यकता नहीं और उस स्त्री को अपनी इज्जत बेच कर पेट पालने पर मजबूर हो जाना पड़ता था।

एक पुरुष अनेक विवाह कर सकता था। स्त्रियाँ बाजार में बेची जाती थीं। बड़े-बड़े उच्च घराने के लोग भी स्त्रियों को खरीद लाते थे और रखेली के रूप में रख लेते थे और जब उसे पुत्र उत्पन्न होता था, तब वह पत्नी के रूप में मानी जाती थी। सुलतानों और राज्य के उच्चाधिकारियों तक के लड़के ऐसी ही स्त्रियों से उत्पन्न होते थे।

ऐसे वैवाहिक जीवन से स्त्रियों की क्या दशा रहती रही होगी, इसका सहज ही अनुमान किया जा सकता है। तलाकों का दौरादौरा था। स्त्रियों का समाज में, कानून में कोई स्थान न था। उन्हें या उनकी सन्तान को सम्पत्ति पर कोई अधिकार न था। घरों में सौतों और सौतेले भाइयों में झगड़े और मार-काट का साम्राज्य था।

परन्तु कमालपाशा द्वारा टर्की में प्रजातन्त्र की स्थापना होने के बाद से वहाँ की स्त्रियों का जीवन नर्क से स्वर्ग बन गया। पर्दा तोड़ दिया गया। लड़कियों को आधुनिक शिक्षा दी जाने लगी। बहु-विवाह और स्त्री-विक्रय का नाम मिटा दिया

गया। तलाकों को वह रूप दिया गया, जो उन्नतिशील यूरोपीय देशों में प्रचलित है। स्कूलों और कालेजों में स्त्रियों को पुरुषों के बराबर उच्च शिक्षा दी जाने लगी। स्त्रियाँ पुरुषों के समान स्वतन्त्रता पूर्वक निकलने लगी और सड़कों, सिनेमा, थियेटरों, होटलों, सार्वजनिक-उत्सवों आदि मे पुरुषों के मध्य में स्वतन्त्रता पूर्वक विचरने लगीं।

तुर्की स्त्रियों ने इस युग-परिवर्तन से समयोचित और सुन्दर लाभ उठाया है। अब वहाँ स्त्रियाँ सुशिक्षित होकर राष्ट्रोत्थान में पुरुषों को पूर्ण सहयोग प्रदान कर रही हैं। सार्वजनिक पदों में साधारण से लेकर सर्वोच्च पदों तक स्त्रियाँ पहुँच गयी हैं। सरकारी दफ्तरों और पुलीस में वे काम करने लगी हैं। वे वकील, बैरिस्टर, डाक्टर और प्रोफेसर होने लगी हैं और मैजिस्ट्रेटी के साधारण पद से लेकर हाइकोर्ट के जजों तक के पद पर भी आसीन होने लगी हैं।

सामाजिक और राजनीतिक अधिकार भी स्त्रियों को प्रदान किए गये हैं। म्युनिसिपल चुनाव का पूर्ण अधिकार उन्हें मिल गया है और अब पार्लमेण्ट के वोटाधिकार प्राप्त करने का वे प्रयत्न कर रही हैं।

केवल दस वर्ष के थोड़े समय के अन्दर तुर्की स्त्रियों ने राष्ट्रपति कमाल की सहायता से जो आशातीत उन्नति कर दिखायी, उसके लिये वे अभिनन्दनीय हैं।

टर्की की सीमा ही में नहीं, उसके बाहर अन्य देशों की हलचलों और प्रतिद्वन्दिताओं में भी वे भाग लेने लगी हैं। अभी १९३२ में समस्त संसार की स्त्रियों के सौन्दर्य की जो प्रति-

द्वन्दिता हुई थी, उसमे हलिस हानूम नाम की तुर्की महिला संसार की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी सिद्ध हुई हैं और विश्व-विख्यात 'मिस यूनीवर्स' के सर्वोच्च पद पर वे आसीन की गयी हैं। इस सम्मान को प्राप्त कर जब वे टर्की वापस गयीं, तो समस्त राष्ट्र की ओर से उनका बड़ा जबरदस्त स्वागत किया गया। समस्त टर्की ने उनका अभिनन्दन किया। केवल इस भाव से नहीं कि एक तुर्की लड़की विश्व-सौन्दर्य प्रतिद्वन्दिता में सर्वश्रेष्ठ सिद्ध हुई है, वरन् इसलिए कि उसकी विजय इस बात की घोषणा करती है कि टर्की ने सदियों की पतितावस्था को त्याग कर कितनी जबर्दस्त उन्नति की है और संसार की सभ्य स्त्रियों के समान पद इतना शीघ्र प्राप्त कर लिया है। इसी भावना को मिस यूनीवर्स ने भी राष्ट्रपति गाजी कमालपाशा द्वारा बधाई का सन्देश प्राप्त होने पर उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए लिखा था कि—"मेरी इस सफलता का समस्त श्रेय आपको है और जो भाव आपने तुर्की स्त्रियों में इतने परिश्रम से भरा है, उसीका यह फल-स्वरूप है।"

वास्तव में तुर्की स्त्रियो ने संसार की स्त्रियो के सामने एक आश्चर्य और महान आदर्श उपस्थित कर दिया है।

कमाल अतातुर्क का बचपन

मास्टर ने पीठ नीली करदी—भेड़ चराने वाला—बागी ! 'मैं एक दिन कुछ बनूँगा' !!

(लेखक—श्री परमानन्द पाण्डेय)

नटखट लड़कों को यदि उनकी रुचि के अनुसार शिक्षा मिले तो वे स्कूली शिक्षा से कहीं अधिक सीख सकते हैं। बचपन में जो लड़के ऊधमी होते हैं, वे मौका पाने पर अपने आगे के जीवन में जो नाम पैदा कर लेते हैं वह उन लड़कों से कहीं बढ़-चढ़ कर होता है, जो प्रारम्भ से ही किताबी-कीड़े बने रहते हैं। यूरोप के तानशाहों का जीवन प्रायः ऐसा ही रहा है और टर्की के अतातुर्क को तो बचपन से ही क्रान्ति का सामना करना पड़ा था।

मुस्तफा कमालपाशा को स्कूल में भर्ती कराने के लिए उसके माँ-बाप की बिलकुल भिन्न-भिन्न रायें थीं। उसकी माँ प्राचीन रूढ़ियों की 'लकीर की फकीर' थी और बाप एक उदारमना

सुधारवादी। पढ़ाई के बारे में माँ-बाप की पटती ही न थी। माँ चाहती थी कि लड़के की पढ़ाई ठेठ इस्लामी ढंग पर हो और बाप चाहता था कि लड़का ऐसे मदरसे में पढ़े जहाँ उसे कुरान की शिक्षा मिलने की बजाय विज्ञान की शिक्षा मिले। दोनों में समझौता हुआ और माँ की इच्छानुसार मुस्तफा को धार्मिक रीति से 'फातमा मुल्ला कादीन स्कूल' में पढ़ने को भेजा गया। बचपन की यह घटना उसे अच्छी तरह याद है। अपने स्कूल जाने के बारे में उसने लिखा है—"मेरी माँ ने धार्मिक रूप से सजाधजा कर मुझे स्कूल भेजा। गुरुजी अपने छात्रों के साथ हमारे घर पर आये। वहाँ एक प्रार्थना की गई और मुझसे अपने माँ-बाप और गुरु की आज्ञा पालने की शपथ ली गई और अपने नये साथियों के साथ एक जुलूस के रूप में हमलोग स्कूल पहुँचे जो एक मस्जिद से लगा हुआ था। यहाँ आकर फिर एक प्रार्थना हुई और उस्ताद ने मुझे कुछ कुरान की आयतें पढ़कर सुनाईं।" यह पढ़ाई ज्यादा दिन तक नहीं टिक सकी। छः महीने बाद ही मुस्तफा को इस स्कूल से छुड़वा दिया। उसका बाप यह नहीं चाहता था, कि इन धार्मिक स्कूलों में लड़के की प्रतिभा नष्ट की जाय। उसने वहाँ से मुस्तफा को हटा कर 'शमसी इफन्दी' नामक शिक्षक के प्राइवेट स्कूल में भर्ती करा दिया। यह स्कूल यूरोपियन ढंग का था। अपने बाप के बारे मे मुस्तफा ने लिखा है—"वे कठमुल्लापन के सख्त खिलाफ थे और पश्चिमी सभ्यता के हिमायती थे।" उसके ऊपर बाप का असर भी बहुत गहरा है। माँ-बाप में जो झगड़ा लड़के की शिक्षा के बारे में था, उससे तत्कालीन परिस्थिति पर अच्छा प्रकाश पड़ता है और

इससे साफ जाहिर होता है कि आगे चलकर मुस्तफा क्यों क्रान्तिकारी बन गया।

उसके पिता अलीरजा बे सालोनिका में बहुत ही साधारण तनख्वाह पर एक कस्टम आफीसर थे और कई बार महीनों तक उन्हे यह तनख्वाह नहीं मिलती थी। इसलिए घर में बड़ी मुसीबत रहा करती थी। बच्चों की परवरिश के लिए बड़ी कठिनाई थी। आखिर कस्टम की नौकरी छोड़ कर अलीरजा बे ने लकड़ी का व्यापार करना शुरू किया और उसमें उनको अच्छी सफलता मिली। यह आराम की जिन्दगी थोड़े ही दिनों गुजरी थी कि बाप का देहान्त हो गया। उस समय मुस्तफा की उम्र नौ वर्ष की थी और परवरिश का कोई चारा न था। मुसीबत से त्राण पाने के लिए उसकी माँ लजासन गाँव में अपने भाई के पास चली गई। यहाँ मुस्तफा को अस्तबल साफ करना पड़ता और भेड़ों को चराना पड़ता था। यह काम करते-करते दो वर्ष बीत गये। इससे एक लाभ भी हुआ। एक कमजोर और दुबले-पतले लड़के से मुस्तफा एक तन्दुरुस्त हट्टा-कट्टा लड़का बन गया; लेकिन वह शान्त और 'रिजर्व' रहता था।

उसकी माँ लड़के के इस जीवन से बहुत दुखी रहती थी। वह उसे एक गड़रिया नहीं बनाना चाहती थी। उसके भविष्य के लिए वह एक सुन्दर स्वप्न देखती थी। आखिर सालोनिका में एक बहन को मुस्तफा की शिक्षा का खर्च देने पर उसने राजी कर लिया।

खेत पर दो साल की शिक्षा के बाद मुस्तफा स्कूल गया। उसकी आदत अपनी थी और वहाँ अपने क्लास के लड़कों से

उसकी गहरी लड़ाई हो गई और इसपर उसके अरबी शिक्षक केमाक हाफिज ने मुस्तफा को सजा दी और सजा भी ऐसी दी कि बेचारे की पीठ नीली पड़ गई। इस बात से मुस्तफा को बड़ी वेदना हुई और उसको ताव भी बहुत आया। आखिर उसने निश्चय किया कि अब कभी भी वह स्कूल नहीं जायगा। लजासन मे वह अपनी माँ के पास लौट गया। वहाँ उसे फिर वही अस्तबल और भेड़ों का काम करना पड़ा; किन्तु अबकी बार नियति कुछ और ही रंग लाने वाली थी और मुस्तफा को और ज्यादा दिन गड़रिया नहीं बनना था।

मुस्तफा का एक दोस्त मेजर कादरी बे का लड़का अहमद था। वह मिलिटरी कालेज में पढ़ता था। उसकी फौजी पोशाक को देखकर मुस्तफा को बड़ी ईर्षा होती थी और अन्त में उसने निश्चय किया कि वह भी एक सिपाही बनेगा। उसकी माँ ने इस विचार का घोर विरोध किया; लेकिन मुस्तफा ने एक न मानी और अपने बाप के एक दोस्त के पास सहायतार्थ पहुँचा। यह दोस्त एक रिटायर्ड आफीसर था। उसने सैलोनिका के फौजी कालेज के लिए मुस्तफा को इजाजत दिलवा दी। मुस्तफा पास हो गया और शीघ्र ही अपने साथियों में सर्वोपरि गिना जाने लगा।

मुस्तफा को गणित से बहुत अभिरुचि थी। गणित का प्रोफेसर कैप्टेन मुस्तफा उसका खास दोस्त ही बन गया था। एक बार उसने मुस्तफा को एक नीचे का क्लास पढ़ाने के लिए दे दिया था। दोनों का नाम मुस्तफा होने से उसके प्रोफेसर ने उसकी असाधारण योग्यता पर प्रसन्न होकर उसे 'कमाल' (अरबी में इसका अर्थ है पूर्णता) की उपाधि दी, जिससे दोनों

में नाम का भेद रहे। इस वक्त से वह मुस्तफा कमाल के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

शीघ्र ही वह पास होता चला गया और मोनस्टिट के ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट में पहुँचा। इस वक्त वह १७ वर्ष का था। एक साथी विद्यार्थी ने उसके बारे में लिखा है—"वह अपने आप को बिलकुल दूर और अलग रखता था और किसी से भी उसकी गहरी दोस्ती न थी। वह बड़ा प्रसन्न और प्रेमी जीव था। वह पढ़ता बहुत था और जितने वक्त वह पढ़ता था उससे तिगुने समय तक वह सोचा-विचारा करता था।"

उसके साथियों से मुस्तफा की नहीं पटी। उन लोगों को मुस्तफा बहुत खराब और अहम्मन्य दिखाई पड़ा, जैसा कि ऊपर के चरित्र से स्पष्ट है। मुस्तफा अलग रहता था और यह उसकी प्रकृति थी। एक बार उन लोगों ने मुस्तफा से पूछा कि वह उन लोगों में शामिल क्यों नहीं होता। इस पर मुस्तफा ने जवाब दिया कि उसे उनमें कोई दिलचस्पी नहीं है। इस जवाब पर लड़कों ने बिगड़ कर कहा—"तुम अपने आपको क्या समझते हो? और क्या तुम बनोगे?" बड़ी गम्भीरता पूर्वक मुस्तफा ने लड़कों को जवाब दिया—"मै एक दिन 'कुछ' बनूँगा" और अपने इस उत्तर को उसने अद्भुत लगन और कठोर परिश्रम से चरितार्थ भी कर दिया।

गर्मियों की छुट्टी में मुस्तफा घर लौटा। वहाँ उसने देखा कि सेठ के एक अमीर आदमी से उसकी माँ पुनर्विवाह कर लिया है। अपनी माँ से इस विवाह पर वह बहुत लड़ा-झगड़ा और अपने सौतेले बाप से बोलने से उसने साफ इनकार

कर दिया। अपने भविष्य के जीवन में उसने फिर उसका कभी नाम नहीं लिया।

मोनस्टिर वापिस पहुँचकर मुस्तफा ने अथक परिश्रम किया। उसको प्रमोशन मिला और कुस्तुन्तुनियाँ में जनरल स्टाफ ट्रेनिंग का उसे स्वर्ण-अवसर प्राप्त हुआ। जनरल स्टाफ कालेज में आकर मुस्तफा देश के कामों में दिलचस्पी लेने लगा। कालेज की क्रान्तिकारिणी संस्था 'वतन' का शीघ्र ही लीडर बन गया। प्रतिभा के बल पर यहाँ तक हुआ। कमाल अतातुर्क अपनी क्रान्तिकारी हलचलों के कारण इस्तम्बूल की लाल जेल में बन्द कर दिया गया और यह तो निर्विवाद है ही कि तानाशाहों का असली राजनैतिक जीवन कैदखानों से प्रारम्भ होता है। इटली के मुसोलिनी के साथ भी यही बात थी, जर्मनी का हिटलर भी जेल में बन्द रहा, रूस का भाग्य-विधाता स्टैलिन भी उससे मुक्त न रह सका और यही बात टर्की के सर्वेसर्वा मुस्तफा कमाल के साथ हुई। उसके जेल में बन्द होने के साथ-साथ उसका बचपन भी उससे विदा ले चुका था और शायद सदा के लिये।

सोये टर्की को जगाने वाले

(ले०—श्री० शंकरदेव विद्यालंकार)

मुझे राष्ट्र के गीत गाने की स्वतंत्रता दे दो। फिर मुझे परवाह नहीं कि राष्ट्र के कायदे-कानून कौन बनाता है।

एक स्काटिश कवि-सैनिक के उपर्युक्त उद्गार विश्व-साहित्य में अमर बन चुके है। प्रश्न होता है कि क्या यह सच है? तुर्किस्तान की वीर रमणी खलीदे खानूम ने नूतन तुर्किस्तान की तवारीख के आधार पर इस प्रश्न का सुन्दर समाधान किया है। श्रीमती खलीदे खानूम कहती हैं कि पदभ्रष्ट, निर्वासित और अत्याचारी खलीफा अब्दुल हमीद के सिंहासन को हिला देने में कवियों की एक-एक कविता का हाथ होगा।

अब्दुल हमीद के अत्याचारी शासन के दिनों में 'मुक्ति' और 'देशभक्ति' इन शब्दों का उच्चारण मात्र फौजदारी गुनाह समझा जाता था। शासन के इन कड़े प्रतिबन्धों ने साहित्य-

कारों को अपना कट्टर दुश्मन बना दिया। धर्म और भूतकाल की रूढ़ियों के विरुद्ध इन साहित्य-विधायकों ने क्रान्ति का शंख फूँका। इस आन्दोलन का प्रतिनिधि और अगुआ था—तौफिक फिकरत !!

इसने 'कुहरा' नाम की एक कविता लिखी है जो वहाँ पर बहुत प्रख्यात है। इस कविता का पहला पद इस प्रकार है।

"हे मेरी प्यारी नगरी, ओढ़ ले। हे करुण विनाश, कुहरे का काला कफन अपने तन पर ओढ़ ले और फिर तू शाश्वत निद्रा-मृत्यु की शय्या पर सो जा।"

श्रीमती खानूम का कथन है कि अब्दुल हमीद के पतन में इस कविता का बड़ा हिस्सा है।

इसी प्रकार फिकरत ने सुलह और बन्धु-प्रेम का सन्देश देने वाली एक लम्बी कविता भी लिखी है। विश्व में पूजनीय मानो जाने वाली प्रचलित वीरता को उसमें धिक्कारा गया है। वह लिखता है—

"वीरता क्या है ? निरी बर्बरता और रक्तपात। विजय क्या है ? क्रूर संहार-लीला। जिसमें पैर रखने तक का स्थान नहीं है। जहाँ पर शवों के ढेर और यातनाएँ बिछी पड़ी हैं। हरी-हरी धान्य-खेतियाँ साफ हो चुकी हैं। शस्य-मंजरियाँ और शैवाल-माला शुष्क और निर्जीव बन गई हैं !!"

दूसरा साहित्यकार है—महम्मद अफीक। इसने फिकरत से उलटी ही विचार-धारा को प्रवाहित किया। इसने धर्म-भावना को ऊर्ध्वगामी बनाया। जनता को बतलाया कि भूतकाल की अवगणना करके कोई प्रजा अपने भविष्य को सुनहरा नहीं

बना सकती। पर इसका अभिप्राय यह नहीं कि महम्मद अकीफ की प्राची के विषय में कोई गैर समझ थी।

प्राची (East) नामक अपनी एक कविता में अकीफ पूर्व का कैसा सुन्दर चित्र उपस्थित करता है।

"हे प्राची के प्रवासी! तूने वहाँ क्या देखा? मैंने देखा—एक किनारे से दूसरे किनारे तक फैले हुए खँडहर और भग्नाव-शेष। नेता-विहीन प्रजाएँ। रोग से विवर्ण बने हुए, झुर्री वाले मुखड़े, झुकी हुई गात्र-यष्टियाँ, मेधाहीन मस्तक, उल्लास-शून्य खाली हृदय, अत्याचारों का जमाव, गुलामी और यंत्रणायें, अनुयायी-विहीन आचार्य लोग, भाई को मारने वाले भाई, उद्देश्य-हीन दिवस और भविष्य-विहीन निशाएँ!!!

× × ×

तुर्क-क्रान्ति का तीसरा साहित्यिक ज्योतिर्धर है—नजीम हिकमत। इसने रूसी-साम्यवाद के द्वारा अपने जीवन में प्रेरणाएँ प्राप्त की हैं। प्राची के विषय में इसके विचार भी लाक्षणिक हैं। वह गाता है—

"प्राची क्या है?

मायावाद, संतोष और किस्मत पर आश्रित मानव-समूह, चाँदी के थालो पर नाचने वाली राजकुमारियाँ, महाराजा लोग और बादशाह पैर के अँगूठे से काटने वाली शुकनासा रमणियाँ तथा हवाई मीनारों पर से बाँग पुकारने वाले दढ़ियल इमाम लोग—उपदेशक।

नहीं नहीं पूर्व ऐसा कल्पना-रंगी कदापि नहीं था और नहीं वैसा बनेगा ही। प्राची अर्थात् मजदूरी करने वाले पीड़ित गुलामों

की भूमि ! पूर्व अर्थात् प्राची निवासियों के सिवाय सब किसी का आश्रय देश !!"

ऐसे-ऐसे गीतों ने तुर्किस्तान की सदियों पुरानी सल्तनत के सिंहासन हिला दिए। नूतन टर्की को जन्म दिया और उसे विश्व-विख्यात बना दिया। ऐसे यहाँ पैदा होंगे तभी सच्चा भारतोदय होगा। जागृति की उस उषा का आलोक निराला ही होगा।

कमाल अतातुर्क विश्राम लेंगे

सारी सम्पत्ति राष्ट्र को दान

सरकारी घोषणा की गई है कि टर्की के राष्ट्र-निर्माता कमाल अतातुर्क ने अपनी सब सम्पत्ति देश को अर्पण कर दी है।

ऐसी भी अफवाह थी कि कमाल अतातुर्क एक कठिन रोग के कारण टर्किश प्रजातंत्र के प्रेसीडेन्ट पद को त्यागेंगे और उनके स्थान का कार्य-भार वर्तमान प्रधान-मंत्री जलाल बयार सँभालेंगे।

❀ इति ❀